शाश्वती

प्रथमो भागः

एकादशवर्गाय संस्कृतस्य पाठ्यपुस्तकम्

(ऐच्छिकपाठ्यक्रमः)

शाश्वती

प्रथमो भागः

एकादशवर्गाय संस्कृतस्य पाठ्यपुस्तकम्

(ऐच्छिकपाठ्यक्रमः)

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
NATIONAL COUNCIL OF EDUCATIONAL RESEARCH AND TRAINING

प्रथम संस्करण
जनवरी 2006 माघ 1927

पुनर्मुद्रण
अप्रैल 2007 बैसाख 1929
अक्तूबर 2007 आश्विन 1929
जनवरी 2008 पौष 1930
जनवरी 2018 माघ 1939 (NTR)

PD 6T ML

© *राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, 2006*

₹ 65.00

एन.सी.ई.आर.टी. वाटरमार्क 80 जी.एस.एम. पेपर पर मुद्रित।

प्रकाशन प्रभाग में सचिव, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, श्री अरविंद मार्ग, नयी दिल्ली 110 016 द्वारा प्रकाशित तथा .... द्वारा मुद्रित।

ISBN 81-7450-472-9

सर्वाधिकार सुरक्षित

- ❑ प्रकाशक की पूर्व अनुमति के बिना इस प्रकाशन के किसी भाग को छापना तथा इलेक्ट्रॉनिकी, मशीनी, फोटोप्रतिलिपि, रिकॉर्डिंग अथवा किसी अन्य विधि से पुनः प्रयोग पद्धति द्वारा उसका संग्रहण अथवा प्रसारण वर्जित है।
- ❑ इस पुस्तक की बिक्री इस शर्त के साथ की गई है कि प्रकाशक की पूर्व अनुमति के बिना यह पुस्तक अपने मूल आवरण अथवा जिल्द के अलावा किसी अन्य प्रकार से व्यापार द्वारा उधारी पर, पुनर्विक्रय या किराए पर न दी जाएगी, न बेची जाएगी।
- ❑ इस प्रकाशन का सही मूल्य इस पृष्ठ पर मुद्रित है। रबड़ की मुहर अथवा चिपकाई गई पर्ची (स्टिकर) या किसी अन्य विधि द्वारा अंकित कोई भी संशोधित मूल्य गलत है तथा मान्य नहीं होगा।

एन. सी. ई. आर. टी. के प्रकाशन प्रभाग के कार्यालय

एन.सी.ई.आर.टी. कैंपस
श्री अरविंद मार्ग
नयी दिल्ली 110 016 फोन : 011-26562708

108, 100 फीट रोड
हेली एक्सटेंशन, होस्डेकेरे
बनाशंकरी III इस्टेज
बेंगलुरु 560 085 फोन : 080-26725740

नवजीवन ट्रस्ट भवन
डाकघर नवजीवन
अहमदाबाद 380 014 फोन : 079-27541446

सी.डब्ल्यू.सी. कैंपस
निकट: धनकल बस स्टॉप पनिहटी
कोलकाता 700 114 फोन : 033-25530454

सी.डब्ल्यू.सी. कॉम्प्लैक्स
मालीगांव
गुवाहाटी 781021 फोन : 0361-2674869

प्रकाशन सहयोग

अध्यक्ष, प्रकाशन प्रभाग	:	*एम. सिराज अनवर*
मुख्य संपादक	:	*श्वेता उप्पल*
मुख्य व्यापार प्रबंधक	:	*गौतम गांगुली*
मुख्य उत्पादन अधिकारी (प्रभारी)	:	*अरुण चितकारा*
सहायक संपादक	:	*एम. लाल*
उत्पादन सहायक	:	

चित्रांकन
प्रदीप नायक

आवरण
आलोक हरि

पुरोवाक्

2005 ईस्वीयां राष्ट्रिय-पाठ्यचर्या-रूपरेखायाम् अनुशंसितं यत् छात्राणां विद्यालयजीवनं विद्यालयेतरजीवनेन सह योजनीयम्। सिद्धान्तोऽयं पुस्तकीय-ज्ञानस्य तस्याः परम्परायाः पृथक् वर्तते, यस्याः प्रभावात् अस्माकं शिक्षाव्यवस्था इदानीं यावत् विद्यालयस्य परिवारस्य समुदायस्य च मध्ये अन्तरालं पोषयति। राष्ट्रियपाठ्यचर्यावलम्बितानि पाठ्यक्रम-पाठ्यपुस्तकानि अस्य मूलभावस्य व्यवहारदिशि प्रयत्न एव। प्रयासेऽस्मिन् विषयाणां मध्ये स्थितायाः भित्तेः निवारणं ज्ञानार्थं रटनप्रवृत्तेश्च शिथिलीकरणमपि सम्मिलितं वर्तते। आशास्महे यत् प्रयासोऽयं 1986 ईस्वीयां राष्ट्रिय-शिक्षा-नीतौ अनुशंसितायाः बालकेन्द्रितशिक्षाव्यवस्थायाः विकासाय भविष्यति।

प्रयत्नस्यास्य साफल्यं विद्यालयानां प्राचार्याणाम् अध्यापकानाञ्च तेषु प्रयासेषु निर्भरं यत्र ते सर्वानपि छात्रान् स्वानुभूत्या ज्ञानमर्जयितुं, कल्पनाशीलक्रियाः विधातुं, प्रश्नान् प्रष्टुं च प्रोत्साहयन्ति। अस्माभिः अवश्यमेव स्वीकरणीयं यत् स्थानं, समयः, स्वातन्त्र्यं च यदि दीयेत, तर्हि शिशवः वयस्कैः प्रदत्तेन ज्ञानेन संयुज्य नूतनं ज्ञानं सृजन्ति। परीक्षायाः आधारः निर्धारित-पाठ्यपुस्तकमेव इति विश्वासः ज्ञानार्जनस्य विविधसाधनानां स्रोतसां च अनादरस्य कारणेषु मुख्यतमः। शिशुषु सर्जनशक्तेः कार्यारम्भप्रवृत्तेश्च आधानं तदैव सम्भवेत् यदा वयं तान् शिशून् शिक्षणप्रक्रियायाः प्रतिभागित्वेन स्वीकुर्याम, न तु निर्धारितज्ञानस्य ग्राहकत्वेन एव।

इमानि उद्देश्यानि विद्यालयस्य दैनिककार्यक्रमे कार्यपद्धतौ च परिवर्तनमपेक्षन्ते। यथा दैनिक-समय-सारण्यां परिवर्तनशीलत्वम् अपेक्षितं तथैव वार्षिककार्यक्रमाणां निर्वहणे तत्परता आवश्यकी येन शिक्षणार्थं नियतेषु कालेषु वस्तुतः शिक्षणं भवेत्। शिक्षणस्य मूल्याङ्कनस्य च विधयः ज्ञापयिष्यन्ति

यत् पाठ्यपुस्तकमिदं छात्राणां विद्यालयीय-जीवने आनन्दानुभूत्यर्थं कियत् प्रभावि वर्तते, न तु नीरसतायाः साधनम्। पाठ्यचर्याभारस्य निदानाय पाठ्यक्रमनिर्मातृभिः बालमनोविज्ञानदृष्ट्या अध्यापनाय उपलब्ध-कालदृष्ट्या च विभिन्नेषु स्तरेषु विषयज्ञानस्य पुनर्निर्धारणेन प्रयत्नो विहितः। पुस्तकमिदं छात्राणां कृते चिन्तनस्य, विस्मयस्य, लघुसमूहेषु वार्तायाः, कार्यानुभवादि-गतिविधीनां च कृते प्राचुर्येण अवसरं ददाति। पाठ्यपुस्तकस्यास्य विकासाय विशिष्टयोगदानाय राष्ट्रियशैक्षिकानुसन्धानप्रशिक्षणपरिषद् भाषापरामर्शदातृसमितेः अध्यक्षाणां प्रो. नामवरसिंहमहोदयानां, संस्कृतपाठ्यपुस्तकानां मुख्यपरामर्शकानां प्रो. राधावल्लभत्रिपाठिमहाभागानां, पाठ्यपुस्तकनिर्माणसमितेः सदस्यानाञ्च कृते हार्दिकीं कृतज्ञतां ज्ञापयति। पुस्तकस्यास्य विकासे नैके विशेषज्ञाः अनुभविनः शिक्षकाश्च योगदानं कृतवन्तः, तेषां संस्थाप्रमुखान् संस्थाश्च प्रति धन्यवादो व्याह्रियते। मानवसंसाधनविकासमन्त्रालयस्य माध्यमिकोच्चशिक्षाविभागेन प्रो. मृणालमिरी प्रो. जी. पी. देशपाण्डेमहोदयानाम् आध्यक्ष्ये संघटितायाः राष्ट्रिय-पर्यवेक्षणसमितेः सदस्यान् प्रति तेषां बहुमूल्ययोगदानाय वयं विशेषेण कृतज्ञाः।

पाठ्यपुस्तकविकासक्रमे उन्नतस्तराय निरन्तरं प्रयत्नशीला परिषदियं पुस्तकमिदं छात्राणां कृते उपयुक्ततरं कर्तुं विशेषज्ञैः अनुभविभिः अध्यापकैश्च प्रेषितानां सत्परामर्शानां सदैव स्वागतं विधास्यति।

नवदेहली निदेशकः
जनवरी 2006 राष्ट्रियशैक्षिकानुसंधानप्रशिक्षणपरिषद्

पाठ्यपुस्तक निर्माण समिति

अध्यक्ष, भाषा सलाहकार समिति

नामवर सिंह, *पूर्व अध्यक्ष,* भारतीय भाषा केन्द्र, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नयी दिल्ली।

मुख्य परामर्शक

राधावल्लभ त्रिपाठी, *पूर्व अध्यक्ष,* संस्कृत विभाग, हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर।

मुख्य समन्वयक

रामजन्म शर्मा, *पूर्व प्रोफ़ेसर* एवं *अध्यक्ष,* भाषा शिक्षा विभाग, एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली।

सदस्य

राजेन्द्र मिश्र, *पूर्व कुलपति,* सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी।

दीप्ति त्रिपाठी, *अध्यक्ष,* संस्कृत विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली।

जगदीश सेमवाल, *निदेशक,* वी.वी.वी.आई.एस., एण्ड आई.एस. पंजाब विश्वविद्यालय, होशियारपुर, पंजाब।

योगेश्वर दत्त शर्मा, सेवानिवृत्त *रीडर,* हिन्दू कालेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली।

सुरेश चन्द्र शर्मा, *प्राचार्य,* राजकीय वरिष्ठ माध्यमिक बाल विद्यालय, शक्ति नगर, दिल्ली।

छविकृष्ण आर्य, *उपप्रधानाचार्य,* केन्द्रीय विद्यालय, सेकेण्ड शिफ्ट, एण्ड्र्यूज गंज, नयी दिल्ली।

सरोज गुलाटी, *पी.जी.टी.,* कुलाची हंसराज मॉडल स्कूल, अशोक विहार, फेज–III, दिल्ली।

पी. एन. झा, *पी.जी.टी.,* राजकीय वरिष्ठ माध्यमिक बाल विद्यालय, आदर्श नगर, दिल्ली।

अनिता शर्मा, *पी.जी.टी.,* विवेकानन्द पब्लिक स्कूल, आनन्द विहार, दिल्ली।

सदस्य – समन्वयक

कमलाकान्त मिश्र, *पूर्व प्रोफ़ेसर,* भाषा विभाग, एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली।

आभार

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् उन सभी विषय–विशेषज्ञों, शिक्षकों एवं विभागीय सदस्यों के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करती है जिन्होंने इस पुस्तक के निर्माण में अपना सक्रिय योगदान दिया है।

परिषद् श्रीनिवास रथ, *प्रोफ़ेसर*, अभिराज राजेन्द्र मिश्र, *प्रोफ़ेसर*, को. ल. व्यासराय शास्त्री (रवीन्द्र नाथ टैगोर के गीताञ्जलि के संस्कृत अनुवादक) प्रभृति आधुनिक साहित्यकारों की भी आभारी है जिनकी कृतियों से प्रस्तुत पुस्तक में पाठ्य सामग्री संकलित की गई है।

पुस्तक की योजना–निर्माण से लेकर प्रकाशन पर्यन्त विविध कार्यों में यथासमय सक्रिय भूमिका निभाने के लिए संस्कृत पाठ्यपुस्तक समिति के समन्वयक व उनके विभागीय सहयोगी कृष्ण चन्द्र त्रिपाठी, *प्रवाचक*, रणजित बेहेरा, *प्रवक्ता* तथा दयाशंकर तिवारी, *प्रोजेक्ट एसोसिएट* साधुवाद के पात्र हैं।

सत्र 2017–18 में पुस्तक के पुनरीक्षण कार्य के समन्वयन के लिए भाषा शिक्षा विभाग के के.सी.त्रिपाठी, *प्रोफ़ेसर*, जतीन्द्र मोहन मिश्र, *प्रोफ़ेसर*, संगीता शर्मा, *असिस्टेंट प्रोफ़ेसर* को परिषद् साधुवाद करती है। पुनरीक्षण में अनेकविध सहयोग एवं मार्गदर्शन के लिए परिषद् पी.एन. शास्त्री, *प्रोफ़ेसर* एवं *कुलपति*, राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान, रमेश कुमार पांडेय, *प्रोफ़ेसर* एवं *कुलपति*, श्रीलालबहादुर शास्त्री राष्ट्रिय संस्कृत विद्यापीठ, रमेश भारद्वाज, *प्रोफ़ेसर*, संस्कृत विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, रंजना अरोड़ा, *प्रोफ़ेसर* एवं *विभागाध्यक्ष*, डी.सी.एस, एन.सी.ई.आर.टी., आभा झा, *पी.जी.टी.*, संस्कृत, गार्गी सर्वोदय कन्या विद्यालय, ग्रीनपार्क, नयी दिल्ली के प्रति हार्दिक कृतज्ञता व्यक्त करती है। पुस्तक पुनरीक्षण में अनेकविध सहयोग हेतु जगदीश चन्द्र काला, *जे.पी.एफ.*, यासमीन अशरफ़, *जे.पी.एफ.* एवं रेखा शर्मा, *डी.टी.पी. ऑपरेटर* धन्यवाद के पात्र हैं।

❖ ❖ ❖

भूमिका

संस्कृत विश्व की अत्यन्त प्राचीन भाषा है। भारतीय संस्कृति का स्रोत भी यही भाषा है। इसमें न केवल हमारे प्राचीन उदात्त संस्कार निहित हैं, अपितु हमारा गम्भीर शास्त्र-ज्ञान एवं पारलौकिक चिन्तन भी इसी भाषा में उपलब्ध है। ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में जितने ग्रन्थ इस भाषा में लिखे गए हैं, उतने विश्व की अन्य किसी भी प्राचीन भाषा में नहीं मिलते। संस्कृत का साहित्य ऋग्वेद काल से लेकर आज तक अबाध गति से प्रवाहित होता रहा है। वेद, व्याकरण, ज्योतिष, छन्द, निर्वचनशास्त्र, अर्थशास्त्र, राजनीति, ज्यामिति, षड्दर्शन आदि के साथ-साथ यह साहित्य कोमल काव्यानुभूतियों से ओत-प्रोत गद्य-पद्य की उर्वर जन्मभूमि है।

संस्कृत भाषा ने समस्त भारत की आधुनिक भाषाओं को प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से पर्याप्त प्रभावित किया है। मध्यकाल में प्राकृत तथा अपभ्रंश साहित्य को तो संस्कृत के बिना समझ पाना बहुत कठिन था। आधुनिक भारतीय साहित्य का अधिकांश भाग संस्कृत साहित्य की ही देन है। आधुनिक भारत की लगभग सभी भाषाओं ने संस्कृत से शब्दावली ग्रहण की है। विदेशों में भी संस्कृत की महत्ता बड़े आदर से स्वीकृत की गई है। विश्व के अनेक विश्वविद्यालयों में संस्कृत भाषा का सम्यक् अनुशीलन हो रहा है।

राष्ट्रीय एकता की दृष्टि से संस्कृत का बहुत महत्त्व है। यद्यपि भारतवर्ष में क्षेत्रीय विषमताएँ एवं विविधताएँ अनन्त हैं, तो भी जिन तत्त्वों का इस देश को एक सूत्र में बाँधे रखने में सर्वाधिक योगदान है, उनमें संस्कृत भाषा तथा इसका साहित्य प्रमुख है। पुराणों में भारत के समस्त भूगोल को इस रूप में चित्रित किया गया है कि उसे पढ़कर प्रत्येक भारतीय के मन में अपने देश के प्रति अगाध आस्था एवं श्रद्धा स्वत: ही उत्पन्न हो जाती है। संस्कृत साहित्य की मूल चेतना समूचे भारतवर्ष को एक राष्ट्र के रूप में देखने की रही है। इतना ही नहीं, **'वसुधैव**

कुटुम्बकम्' (सारी पृथ्वी ही हमारा परिवार है) अथवा **'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्'** (हम सारे विश्व को श्रेष्ठ बनाएँ) जैसी मर्मस्पर्शी उक्तियाँ मानव-मात्र के प्रति आत्मीयता के भाव व्यक्त करती हैं।

वेद सारे विश्व का प्राचीनतम वाङ्मय माना जाता है। भारतीय संस्कृति के इतिहास में वेदों का स्थान नितान्त महत्त्वपूर्ण है। इन्हीं की दृढ़ आधारशिला पर भारतीय धर्म एवं संस्कृति का भव्य प्रासाद प्रतिष्ठित है। भारतीयों के आचार-विचार, रहन-सहन, धर्म-कर्म आदि के रहस्यों को भलीभाँति जानने के लिए वेदों का ज्ञान परमावश्यक है। भारतीय समाज में वेद की प्रतिष्ठा सर्वाधिक है। भारतीय परम्परा में पवित्र ज्ञानराशि वेद को अपौरुषेय (मनुष्य द्वारा अरचित) तथा शाश्वत माना गया है किन्तु भारतीय परम्परा के विपरीत पाश्चात्य विद्वानों ने वेदों का रचनाकाल निश्चित करने के अथक प्रयास किए हैं। प्रो. मैक्समूलर ने वेदमन्त्रों की रचना 1200 वर्ष ई.पू., प्रो. विण्टरनित्स ने 2000 वर्ष ई. पू. तथा प्रो. हरमन जैकोबी ने कृत्तिका नक्षत्रों की वैदिक स्थिति के आधार पर वेदमन्त्रों की रचना 4500 वर्ष ई.पू. निश्चित की है। लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक के विवेचन के अनुसार यह काल और भी पूर्ववर्ती होना चाहिए। ऋग्वेद का गम्भीर अध्ययन करने के बाद उन्होंने मृगशिरा नक्षत्र में वसन्त सम्पात होने के अनेक संकेत एकत्रित किए। उन्हीं के आधार पर इन्होंने वेदमन्त्रों की सर्वप्रथम रचना का काल 6000-4000 वर्ष विक्रम संवत् पूर्व माना।

भारतीय परम्परा के अनुसार समग्र वैदिक ज्ञानराशि पहले विभाजित नहीं थी। लोकोपकार की दृष्टि से द्वापर युग के अन्त में महर्षि वेदव्यास ने इसका त्रिधा विभाजन किया – ऋग्वेद, यजुर्वेद और सामवेद। ऋग्वेद में स्तुतिपरक मन्त्रों का संकलन किया गया। ऋक् का अर्थ होता है – स्तुति। इसी के आधार पर इस वेद का नाम ऋग्वेद रखा गया – **ऋचां वेदः ऋग्वेदः**। यज्ञ में उपयोगी मन्त्रों के संकलन को यजुर्वेद कहा गया। यजुष् का अर्थ है – यजन (यज्ञ) में प्रयुक्त होने वाले मन्त्र। सामन् का अर्थ, देवताओं को प्रसन्न करने वाले मन्त्र हैं। अतः ऐसे साममन्त्रों के संकलन को सामवेद कहा गया। कालान्तर में ऋक्, यजुष् और सामन् के

माध्यम से तीनों रूपों में व्यवस्थित ऋग्वेद, यजुर्वेद और सामवेद को **त्रयी** की संज्ञा से अभिहित किया गया। किंचित् काल पश्चात् महर्षि अथर्वा ने अनेकविध मन्त्रों का एक पृथक् संकलन तैयार किया जो अथर्ववेद के नाम से प्रख्यात हो गया। इसमें ब्रह्म, परमात्मा, राजा, राज्यशासन, संग्राम, नाना देवता, यज्ञ, राष्ट्रीय चेतना, औषधोपचार, आधि–व्याधि निवारण आदि अनेक प्रकार के सांसारिक विषय समाविष्ट हैं।

संस्कृत काव्य की परम्परा

काव्य के बीज वैदिक सूक्तों में भी दृष्टिगोचर होते हैं। ऋग्वेद में इन्द्र, अग्नि, वरुण, मित्र, रुद्र, सवितृ, सोम, विष्णु, उषा आदि देवों की भावानुप्राणित स्तुतियाँ उपलब्ध होती हैं। ये साङ्गोपाङ्ग संस्कृत कविता के उत्कृष्ट उदाहरण हैं। ऋग्वेद की यह कविता ही विश्व की प्रथम कविता है। इस कविता में माधुर्य का अनुपम परिपाक, प्राकृतिक सुषमा के अद्भुत चित्र तथा जनजीवन की करुण एवं रसपूर्ण संवेदनाएँ दृष्टिगोचर होती हैं। सूर्या तथा सोम के विवाह–प्रसंग (ऋ . 10.34) में प्रेम एवं सौन्दर्य की तथा अक्षसूक्त में एक जुआरी के मन की गहरी व्यथा की अभिव्यक्ति किस सहृदय के मन को नहीं छूती। इसी दृष्टि से उषस्–सूक्त तथा इन्द्र–इन्द्राणी, यम–यमी, पुरूरवा–उर्वशी आदि संवाद–सूक्त तथा मण्डूक–सूक्त उदात्त काव्योचित अभिव्यक्तियों के लिए उल्लेखनीय हैं।

वैदिक कविता ने समग्र विश्व को स्नेह, साहचर्य, सहयोग, ममता एवं विश्वबन्धुत्व की शिक्षा दी है। समान यात्रा, समान वाणी और समान चिंतन का अनुपम आदर्श हमें ऋग्वेद की कविता में दृष्टिगोचर होता है–

सङ्गच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।
देवा भागं यथा पूर्वे सञ्जानाना उपासते॥ (*ऋ. X. 191.2*)

हमारे विचार समान हों, हमारी सहमति समान हो, हमारी मनोवृत्ति समान हो! समत्व का यह महामन्त्र आज के युग में नितान्त सार्थक है।

इसी प्रकार सम्पूर्ण पृथ्वी–सूक्त (अथर्व. XII. 1) राष्ट्रीय अस्मिता का चूडान्त निदर्शन है। वैदिक कवि तो पृथ्वी को ममतामयी माँ के ही

रूप में देखने का अभिलाषी है। **'माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः'** का उद्घोष अथर्ववेद का महामन्त्र है।

विषयवस्तु की दृष्टि से वेद का चार भागों में विभाजन किया जाता है – मन्त्र, ब्राह्मण, आरण्यक एवं उपनिषद्। यहाँ मन्त्र का अर्थ मनन योग्य वाक्य है जो ऋग्वेद आदि संहिताओं के रूप में उपलब्ध है। इन मन्त्रों की व्याख्या करने वाले भाग ब्राह्मण हैं। ये ग्रन्थ यज्ञीय कर्मकाण्ड से जुड़े हैं। आरण्यक ग्रन्थों में वानप्रस्थोचित नियम तथा आचारसंहिता का उल्लेख है। उपनिषदों का प्रतिपाद्य विषय है पारलौकिक गूढ़ रहस्यों का व्याख्यान। इस तरह वेद असीम हैं। उन्हें सही ढंग से समझने, उनके उच्चारण तथा उचित क्रियाकलाप में प्रयुक्त करने के लिए छह वेदाङ्गों का विकास किया गया। ये हैं- शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द और ज्योतिष। ये सभी अपने-आप में स्वतन्त्र शास्त्रों के रूप में विकसित हुए हैं।

कर्मकाण्ड एवं वानप्रस्थोचित नियमों से सम्बद्ध होने के कारण ब्राह्मण तथा आरण्यक ग्रन्थों में कविता का प्रस्फुटन न के बराबर है। किन्तु उपनिषद् वाङ्मय में काव्यधारा का एक प्रौढ़ एवं अलंकृत रूप दृष्टिगोचर होता है। उपमा, उत्प्रेक्षा तथा रूपकादि अलंकारों से ओत-प्रोत यह कविता गूढ़तम विषयों को सरलतम शब्दों में प्रतिपादित करती है। जिस प्रकार बहती हुई नदियाँ अपना नाम एवं रूप छोड़कर समुद्र-रूप हो जाती हैं, ठीक उसी प्रकार साधक भी परब्रह्म में विलीन हो जाता है-

यथा नद्यः स्यन्दमानाः समुद्रेऽस्तं गच्छन्ति नामरूपे विहाय।
तथा विद्वान् नामरूपाद् विमुक्तः परात्परं पुरुषमुपैति दिव्यम्।।

(*मु.उ. III 2.8*)

वैदिक कविता, निस्सन्देह आर्ष-प्रज्ञा का लीलाविलास है। यह कविता कविता के लिए नहीं लिखी गई है। इसमें तो वैदिक ऋषि गूढ़ विषयों का चिन्तन करते करते अत्यन्त सहृदय हो उठता है। प्रकृति-सौन्दर्य के नयनाभिराम दृश्य तथा लोकजीवन के मर्मस्पर्शी यथार्थ स्वतः ही वर्णनों में गुम्फित हो जाते हैं। किन्तु कालान्तर में वेद की यही नैसर्गिक कविता एक परिनिष्ठित ढाँचे में ढल गई जिसका निदर्शन हमें रामायण, महाभारत और पुराणों में मिलता है।

रामायण की रचना का एकमात्र उद्देश्य आदर्श महामानव के चरित्र की स्थापना था। मर्यादा पुरुषोत्तम राम के चरित्र में भक्तवत्सल, शरणागतरक्षक, दुष्टविनाशक जैसे उदात्त गुण चरितार्थ होते हैं। उस महान् चरित्र का ही यह प्रभाव था कि रामकथा देश, काल एवं व्यक्ति की सीमाओं का अतिक्रमण करती हुई प्राचीन चम्पा, कम्बोज (कम्बोडिया), कटाह द्वीप (मलेशिया) तथा सुवर्णद्वीप (जावा, सुमात्रा, बाली) में भी प्रसिद्ध हो गई।

रामायण में यद्यपि संस्कृत कविता का भावपक्ष अधिक प्रबल है, तथापि उसमें लोकजीवन के विविध पक्ष भी उपेक्षित नहीं हैं। परवर्ती संस्कृत कवियों ने रामायण को आदिकाव्य तथा वाल्मीकि को आदिकवि के नाम से अभिहित किया है। रामायण की कविता निस्सन्देह परवर्ती संस्कृत कविता के समृद्धतम रूप की प्रथम आधारशिला है।

महाभारत महर्षि व्यास की कालजयी कृति है। एक लाख श्लोकों का यह ग्रन्थ विविध सूचनाओं का विश्वकोष एवं ज्ञान-विज्ञान का भण्डारग्रन्थ है। मूलतः तो यह ग्रन्थ कौरवों तथा पाण्डवों के महायुद्ध एवं विजय की कथा है, किन्तु इतिहास के इस वर्णन में भी काव्यात्मकता का अद्‌भुत निर्वाह महर्षि वेदव्यास ने किया है। यह सत्य है कि रामायण और महाभारत भाषा, भाव, शैली तथा कथानक की दृष्टि से समग्र संस्कृत साहित्य के उपजीव्य ग्रन्थ बन गए हैं।

पुराणों का रचयिता भी महर्षि व्यास को ही माना जाता है। ये पुराण संख्या में 18 हैं- मत्स्य, मार्कण्डेय, भागवत, वामन, वराह, विष्णु, वायु, अग्नि, गरुड़, स्कन्द आदि इनमें प्रमुख माने जाते हैं। इन पुराणों का प्रतिपाद्य विषय तो सर्ग, प्रतिसर्ग, वंश, मन्वन्तर आदि का विस्तृत विवेचन है, किन्तु कविता का अजस्र प्रवाह भी इनमें दृष्टिगोचर होता है। भागवतपुराण का वेणुगीत, गोपीगीत तथा भ्रमरगीत समूची संस्कृत कविता का शृंगार है। पुराण की कविता किसी भी दृष्टि से भास एवं कालिदास की रसमयी कविता से कम नहीं है। कृष्ण के विरह में व्याकुल उनकी राजरानियों का कुररी पक्षी को दिया गया निम्न उपालम्भ अन्योक्तिपरम्परा का अनुपम उदाहरण है-

कुररि विलपसि त्वं वीतनिद्रा न शेषे
स्वपिति जगति रात्र्यामीश्वरो गुप्तबोधः।
वयमिव सखि किंचिद् गाढनिर्भिन्नचेता
नलिननयनहासोदारलीलेक्षितेन।। (*भागवत10.90.15*)

पुराणों में भारतदेश की गौरव–गाथा का अनुपम निदर्शन है। भारत भूमि को सारे विश्व में श्रेष्ठ कहा गया है, इसे स्वर्ग से भी अधिक स्पृहणीय बताया गया है। कुछ उदाहरण देखें–

धन्याः खलु ते मनुष्याः
ये भारते नेन्द्रियविप्रहीनाः। (*भागवत2/3/26*)

सर्वेन्द्रिय सम्पन्न होकर भी जो भारत देश में (जन्म पाते) हैं, वे (ही) मनुष्य भाग्यशाली हैं।

यतो हि कर्मभूरेषा जम्बूद्वीपे महामुने।
अत्रापि भारतं श्रेष्ठमतोऽन्या भोगभूमयः।।

(*शिवमहापुराण5/18/17*)

हे महामुने! इस (सर्वश्रेष्ठ) जम्बूद्वीप में भी भारतवर्ष सर्वश्रेष्ठ है। क्योंकि यह कर्मभूमि है। इसके अतिरिक्त सभी (देश) भोग–भूमियाँ हैं।

स्वर्गापवर्गास्पदमार्गभूते
धन्यास्तु ते भारतभूमिभागे।
गायन्ति देवाः किल गीतकानि
भवन्ति भूयः पुरुषाः सुरत्वात्।।

(*शिवमहापुराण5/18/19*)

यह सच है कि देवता (इस आशय के) गीत गाया करते हैं कि वे भाग्यशाली हैं जो स्वर्ग और मोक्ष का मार्ग बने हुए भारतदेश में, अपने देवत्व की समाप्ति पर पुनः मनुष्य बनकर जन्म लेते हैं।

जनुर्हि येषां खलु भारतेऽस्ति
ते स्वर्गमोक्षोभयलाभवन्तः।।

(*शिवमहापुराण5/18/21*)

जिनका भारतदेश में जन्म हुआ है वे स्वर्ग और मोक्ष, दोनों ही का लाभ प्राप्त करने वाले हो सकते हैं।

वैदिक वाङ्मय, रामायण, महाभारत एवं पुराण की ऊँची-नीची उपत्यकाओं में बहती सरस संस्कृत काव्यधारा अब भागीरथी की तरह समतलभूमि में प्रवेश कर अपने तटों पर पाणिनि, पतंजलि, कालिदास, भारवि, माघ एवं श्रीहर्ष जैसे पावन तीर्थों का निर्माण करने में लग जाती है। महर्षि पाणिनि (ई. पू. 5वीं शती) ने चिरकाल से प्रयोग में आ रही भाषा को परिमार्जित कर उसे एक स्थिर रूप प्रदान किया जिसे संस्कृत कहा जाने लगा। लोक के लिए अधिक उपयोगी, सरल एवं बोधगम्य होने के कारण ही इस भाषा को कालान्तर में लौकिक संस्कृत कहा जाने लगा।

महर्षि पाणिनि-प्रणीत *'जाम्बवतीविजय'* सम्भवत: लौकिक संस्कृत भाषा का प्रथम महाकाव्य है जो अब उपलब्ध नहीं है। तत्पश्चात् वररुचि-प्रणीत महाकाव्य *'स्वर्गारोहण'* का उल्लेख भी मिलता है। वररुचि का काल ई.पू. चतुर्थ शती माना जाता है। पतंजलि (ई.पू. 150 वर्ष) के महाभाष्य से भी संस्कृत कविता के विकास के बहुमूल्य साक्ष्य मिलते हैं। वासवदत्ता, सुमनोत्तरा तथा भैमरथी नामक आख्यायिकाओं का उल्लेख हमें महाभाष्य में ही मिलता है।

महाभाष्यकार पतंजलि के अनन्तर संस्कृत कविता का श्रेष्ठ स्वरूप महाकवि कालिदास की कृतियों में देखने को मिलता है। वेदों से प्रारम्भ काव्यधारा पुराणों के कलेवर तक जहाँ मुक्त वातावरण में प्रवाहित हुई वहीं उसके अनन्तर उसका विकास काव्य-लक्षणों की सीमाओं के बीच हुआ। ईसा की प्रारम्भिक शताब्दियों में आविर्भूत आचार्य भरत का नाट्यशास्त्र काव्यशास्त्रीय लक्षणों का प्रथम मानक ग्रन्थ है जिसमें रस, गुण, अलंकार, छन्द एवं रंगमंच का सूक्ष्म विवेचन मिलता है। शैली के आधार पर कविता का गद्य, पद्य तथा चम्पू के रूप में त्रिधा विभाजन भी काव्यशास्त्र में मिलता है। अवान्तर काल में भामह, दण्डी तथा रुद्रट आदि आचार्यों ने जैसे-जैसे काव्यशास्त्रीय तथ्यों को परिमार्जित किया वैसे-वैसे काव्यकृतियों के स्वरूप भी परिवर्तित होते गए।

ई.पू. प्रथम शती के उज्जयिनी-नरेश विक्रमादित्य के राजकवि महाकवि कालिदास ने दो महाकाव्य – *रघुवंश* एवं *कुमारसम्भव*, दो खण्डकाव्य – *मेघदूत* एवं *ऋतुसंहार* तथा तीन नाटक –*अभिज्ञानशाकुन्तल, विक्रमोर्वशीय तथा मालविकाग्निमित्र* की रचना की। कालिदास के युग में हुए कवियों में अश्वघोष, शूद्रक, मातृचेट, आर्यशूर, कुमारदास तथा प्रवरसेन आदि की गणना होती है। इसे संस्कृत कविता का उत्कर्ष काल माना जाता है। इस युग की कविता में भाव तथा भाषा का सुंदर समन्वय मिलता है तथा इसमें व्यंजनावृत्ति की प्रधानता है। साथ ही, उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, अप्रस्तुतप्रशंसा, समासोक्ति जैसे कोमल एवं सहज अर्थालंकारों द्वारा कविताकामिनी का सर्वत्र अलंकरण मिलता है। कालिदास की कविता इस विधा का सर्वोत्तम निदर्शन है। निम्नलिखित पद्य में भाव-सौन्दर्य एवं उपमा का मंजुल समन्वय द्रष्टव्य है।

सञ्चारिणी दीपशिखेव रात्रौ यं यं व्यतीयाय पतिंवरा सा।
नरेन्द्रमार्गाट्ट इव प्रपेदे विवर्णभावं स स भूमिपालः॥

(*रघुवंश6.67*)

महाकवि भारवि (छठी शती ई.) के साथ कालिदासोत्तर संस्कृत कविता का उदय हुआ। इस युग के प्रमुख कवि हैं – भारवि, माघ, भट्टि, रत्नाकर, श्रीहर्ष आदि। इस युग की कविता में कलापक्ष की प्रधानता दिखाई देती है।

प्रायः 17वीं शती ई. में पंडितराज जगन्नाथ के साथ संस्कृत कविता के कलात्मक उत्कर्ष का अध्याय पूर्ण समझ लिया जाता है। परन्तु 19वीं शती के राष्ट्रीय पुनर्जागरण के साथ उसमें भी नए जीवन और नई चेतना का संचार आरम्भ हो गया। इस युग के संस्कृत कवियों ने प्राचीन परम्पराओं का परित्याग न करते हुए भी राष्ट्र के नूतन परिवेश में काव्य-साधना की। पं. अम्बिकादत्त व्यास, म.म. रामावतार शर्मा, अप्पा शास्त्री राशिवडेकर, भट्ट मथुरानाथ शास्त्री आदि का नाम इस युग के कवियों में उल्लेखनीय है। यह आधुनिक संस्कृत कविता का उदयकाल था।

एक ओर जहाँ संस्कृत कविता मानवीय संवेदना से जुड़कर विकसित हो रही थी वहीं दूसरी ओर विज्ञान एवं शास्त्र-चिन्तन से जुड़ी दूसरी काव्यधारा भी समानान्तर स्तर पर प्रवाहित हो रही थी। आयुर्वेद, रसायन, ज्योतिष जैसे वैज्ञानिक विषयों के साथ-साथ काव्यशास्त्र, दर्शनशास्त्र, गणित, तन्त्र, संगीत, काम आदि शास्त्रों का पल्लवन भी अबाध गति से होता रहा था। ये सभी शास्त्रीय ग्रन्थ प्रायः पद्यबद्ध हैं। इनमें आयुर्वेद के चरकसंहिता एवं सुश्रुतसंहिता, रसायनविज्ञान के रसरत्नाकर (नागार्जुन), रसहृदयतन्त्र (भगवत्पाद), रसरत्नसमुच्चय (वाग्भट) रसेन्द्रचूडामणि (सोमदेव) ज्योतिषशास्त्र के आर्यभटीय (आर्यभट्ट) पंचसिद्धान्तिका, बृहज्जातक, बृहत्संहिता (वराहमिहिर-505 ई.) तथा भास्कराचार्य, नीलकण्ठ, कमलाकर आदि विद्वानों के ग्रन्थ उल्लेखनीय हैं।

काव्यशास्त्र के ग्रन्थों में काव्यालंकार (भामह-सातवीं शती ई.) काव्यादर्श (दण्डी सातवीं शती ई.), काव्यालंकार (रुद्रट-आठवीं शती ई.), वक्रोक्तिजीवित (कुन्तक-ग्यारहवीं शती ई.), काव्यप्रकाश (मम्मट-ग्यारहवीं शती ई.), साहित्यदर्पण (विश्वनाथ-चौदहवीं शती ई.) तथा रसगङ्गाधर (पण्डितराज जगन्नाथ-सत्रहवीं शती ई.) उल्लेखनीय हैं। आचार्य भरत का नाट्यशास्त्र, धनञ्जय का दशरूपक, रामचन्द्र-गुणचन्द्र का नाट्यदर्पण आदि नाट्यशास्त्रीय ग्रन्थ प्रसिद्ध हैं। आचार्य पिङ्गल का छन्दःशास्त्र, क्षेमेन्द्र का सुवृत्ततिलक, नकुल का अश्वशास्त्र, वात्स्यायन का कामशास्त्र, कौटिल्य तथा मनु, याज्ञवल्क्य आदि के स्मृतिग्रन्थ भी अपनी-अपनी विधाओं के मूल स्रोत हैं। वस्तुतः विज्ञान एवं शास्त्र पर आधारित संस्कृत वाङ्मय का भण्डार बहुत विशाल एवं विविध है। यहाँ केवल परिचयात्मक ज्ञान के लिए ही किंचित् सामग्री दी गई है।

संस्कृत गद्यकाव्य की परम्परा

संस्कृत गद्य की परम्परा वैदिक काल से मानी जा सकती है। तैत्तिरीय संहिता में गद्य का प्रयोग बहुत मात्रा में मिलता है। वैदिक साहित्य में ब्राह्मणों, आरण्यकों और उपनिषदों में संस्कृत गद्य का प्रभूत विकसित रूप पाया जाता है। शतपथ और ऐतरेय ब्राह्मण के कुछ गद्यमय आख्यान

तो उत्तरकालीन कवियों के लिए उपजीव्य बन गए हैं।वैदिक साहित्य के बाद सूत्र-साहित्य में, विशेषकर धर्मसूत्रों में, संस्कृत-गद्य का विकसित रूप मिलता है। पाणिनि की अष्टाध्यायी पर रचित पतंजलि का महाभाष्य गद्य में लिखा गया है। महाभारत में भी कहीं-कहीं संस्कृत-गद्य के उत्कृष्ट उदाहरण देखने को मिलते हैं। दूसरी शती ई. में तो गद्य के विकास के प्रौढ़ रूप मिल जाते हैं। इनमें रुद्रदामन् का गिरनार शिलालेख अलंकृत गद्यकाव्यशैली का उत्कृष्ट उदाहरण है। इस काल तक गद्य काव्यधारा निश्चित रूप में अपना स्वतन्त्र अस्तित्व बना चुकी थी। उसके बाद आर्यशूर की जातकमाला में मनोहारी गद्य का स्वरूप मिल जाता है। हरिषेण द्वारा रचित समुद्रगुप्त-प्रशस्ति में भी संस्कृत गद्य का सुन्दर एवं प्रौढ़ रूप दिखाई देता है। इस तरह पाँचवीं शती तक आते-आते संस्कृत गद्य अपनी सभी विधाओं में प्रतिष्ठित हो चुका था। गुणाढ्य की बृहत्कथा से प्रभावित होकर *वेताल-पंचविंशतिका* जैसी कथायें लौकिक संस्कृत साहित्य में प्रतिष्ठा पा चुकी थीं। *दिव्यावदान,अवदानशतक* आदि जैसी सरस कथायें संस्कृत-गद्य को खूब पल्लवित करने लगीं। संस्कृत नाटकों में भी संवाद के रूप में गद्यकाव्य अपने वैभव को प्राप्त कर चुका था। छठी शती तक आते-आते गुण, अलंकार और रस की दृष्टि से गद्यकाव्य पर्याप्त समृद्ध हो चुका था। उसी काल में बाण की वाणी ने अपनी रचनाओं *हर्षचरित* और *कादम्बरी* के माध्यम से गद्यकाव्य को उन्नति की पराकाष्ठा तक पहुँचा दिया। बाण के गद्य में वर्ण-विन्यास, शब्द-प्रयोग, अर्थ-संकल्पना, भाव-सामंजस्य एवं रसमाधुर्य अपनी पराकाष्ठा पर पहुँच जाता है। उसके बाद के गद्यकारों में सुबन्धु, दण्डी, धनपाल, सोड्ढल, वामनभट्ट, अम्बिकादत्त व्यास आदि का नाम उल्लेखनीय है।

संस्कृत गद्यकाव्य की रूप, आधार, विषय आदि की दृष्टि से कई विधायें हैं जो इस प्रकार हैं- कथा, आख्यायिका, आख्यान, चम्पू, प्रशस्ति, अभिलेख, पत्र एवं निबन्ध। इनमें कथा प्राचीनतम विधा है जो कल्पनाप्रसूत कहानी पर आधारित होती है जैसे- बाण की *कादम्बरी।* ऐतिहासिक विषयवस्तु को आधार बनाकर लिखे गए गद्यकाव्य को आख्यायिका कहते हैं, यथा- बाण का *हर्षचरित* । आख्यान का आकार

प्रायः छोटा होता है जिसमें ऐतिहासिक तथा काल्पनिक दोनों प्रकार के विषय होते हैं। संस्कृत के आख्यान-साहित्य में *पंचतन्त्र, हितोपदेश, शुकसप्तति* आदि प्रसिद्ध हैं।

गद्य-पद्य मिश्रित काव्य को चम्पू कहा गया है। संस्कृत-साहित्य में त्रिविक्रमभट्ट का नलचम्पू, भोज का चम्पूरामायण, सोमदेवसूरि का यशस्तिलकचम्पू आदि विशेष महत्त्वपूर्ण हैं। संस्कृत के कवियों ने अपने आश्रयदाता राजाओं की प्रशंसा में प्रायः गद्यकाव्यों की रचना की है जिन्हें प्रशस्तिकाव्य के नाम से जाना जाता है। प्राचीन काल में शिलाओं, ताम्रपत्रों तथा स्तूपों पर प्रायः शासनादेश लिखे जाते थे। इनका गद्य सामान्य गद्य से भिन्न होता था। अतः अभिलेख गद्य को एक पृथक् भेद मान लिया गया। पत्र-लेखन भी प्राचीन काल से ही होता रहा है। संस्कृत गद्य-साहित्य की अपेक्षाकृत नवीन विधा निबन्ध-लेखन है। संस्कृत गद्यमय निबन्धों में हृषीकेश शास्त्री की *प्रबन्धमंजरी*, रामावतार शर्मा का *प्रकीर्णनिबन्ध* आदि उल्लेखनीय हैं।

संस्कृत के प्रमुख गद्यकारों में आर्यशूर का नाम सर्वप्रथम लिया जा सकता है। उनका स्थितिकाल 300 ई. के आसपास माना जाता है। उनकी रचना-*जातकमाला* में दीर्घ एवं लघु दोनों प्रकार के समासों का आदर्श समन्वय प्राप्त होता है। छठी शती में हुए दण्डी का दशकुमारचरित संस्कृत गद्य का उत्कृष्ट निदर्शन है। इसकी भाषा नैसर्गिक, प्रवाहपूर्ण एवं मुहावरेदार है। दण्डी का पदलालित्य प्रसिद्ध है। सातवीं शती के पूर्वार्द्ध में सुबन्धु ने गौडी रीति में वासवदत्ता नामक गद्यग्रन्थ की रचना की जिसमें कन्दर्पकेतु और वासवदत्ता की प्रणयकथा वर्णित है। सुबन्धु ने अपनी रचना में लम्बे-लम्बे समासों, अनुप्रास तथा श्लेष अलंकार का विशेष रूप से प्रयोग किया है।

संस्कृत गद्य साहित्य में सर्वाधिक प्रसिद्ध गद्यकार बाण ही हैं। उनकी *हर्षचरित* एवं *कादम्बरी* नाम की दो रचनायें गद्यकाव्य का अलंकार मानी गई हैं। रस, अलंकार, गुण, रीति आदि के समुचित प्रयोग के कारण *कादम्बरी* संस्कृत की सर्वोत्कृष्ट रचना मानी जाती है। त्रिविक्रमभट्ट की *नलचम्पू* सरस एवं प्रसादपूर्ण रचना है। इसमें सभङ्ग

श्लेष एवं अभङ्ग श्लेष की प्रधानता है। धनपाल की *तिलकमंजरी,* बाण की शैली में लिखी गई है। इसकी भाषा पर्याप्त प्रांजल एवं शैली दुरूहता से रहित है। 11वीं शती के सोड्ढल की *उदयसुन्दरीकथा* गद्यबाहुल्य के कारण गद्यकाव्य में ही गिनी जाती है। इसमें पदसौष्ठव तथा आरोह स्पष्ट प्रतीत होते हैं। 19वीं शती के पूर्वार्द्ध में हुए अम्बिकादत्त व्यास के गद्यकाव्य *शिवराजविजय* में छत्रपति शिवाजी का जीवन-वृत्त चित्रित है। इसमें यत्र-तत्र बाण की शैली का अनुकरण है। सम्पूर्ण गद्यकाव्य राष्ट्रीय भावना से ओत-प्रोत है।

संस्कृत भाषा में गद्य-रचना कम हुई है फिर भी विभिन्न कालों में कवियों ने गद्यकाव्य की रचना में अपना कौशल प्रदर्शित किया है। आधुनिक काल के गद्यकारों में पण्डिता क्षमाराव (1890-1954) का नाम अग्रणी है। उन्होंने *कथामुक्तावली, विचित्रपरिषद्यात्रा* इत्यादि कई गद्य-काव्य लिखे हैं। इनके अतिरिक्त मथुरानाथ शास्त्री, हृषीकेश भट्टाचार्य, नवलकिशोर काङ्कर आदि के नाम भी आधुनिक गद्य साहित्य में उल्लेखनीय हैं।

संस्कृत नाट्यसाहित्य की परम्परा

नाटक संस्कृत काव्य का सुन्दरतम रूप माना गया है- **'काव्येषु नाटकं रम्यम्'**। दर्शकों द्वारा देखे जाने के कारण इसे दृश्यकाव्य भी कहा जाता है। नाट्य की महिमा बतलाते हुए भरतमुनि ने लिखा है कि 'संसार का ऐसा कोई ज्ञान, शिल्प, कला, योग और कर्म नहीं है, जो इसमें न आता हो।' महाकवि कालिदास ने भी कहा है कि 'नाटक भिन्न-भिन्न रुचि के लोगों के लिए मनोरंजन का एक सामान्य साधन है'। इसीलिए नाटक को संस्कृत काव्य की चरमपरिणति माना जाता है- **'नाटकान्तं कवित्वम्'**। सभी प्रकार के काव्यरूपों में नाटक अपेक्षाकृत अधिक जनप्रिय होते हैं, क्योंकि इनमें मनोरंजन, रस-भावाभिव्यक्ति और विषय की विविधता अधिक पाई जाती है।

नाटक की उत्पत्ति के बारे में विद्वानों के भिन्न-भिन्न मत मिलते हैं। भारतीय परम्परा नाटक को पञ्चम वेद मानती है। महामुनि भरत के

अनुसार ब्रह्मा ने चारों वेदों का ध्यान करके ऋग्वेद से संवाद, सामवेद से गान, यजुर्वेद से अभिनय और अथर्ववेद से रस के तत्त्वों को लेकर *'नाट्यवेद'* नामक पञ्चम वेद की रचना की। कई विद्वानों ने ऋग्वेद के संवाद-सूक्तों में संस्कृत नाटकों का प्रारम्भिक रूप देखा है। इन सूक्तों में *इन्द्र-मरुत्, अगस्त्य-लोपामुद्रा, विश्वामित्र-नदी, वसिष्ठ-सुदास, यम-यमी, इन्द्र-इन्द्राणी, पुरूरवा-उर्वशी, सरमा-पणि* आदि के संवाद बहुत प्रसिद्ध हैं। ये संवादात्मक सूक्त नाटकीय माने गए हैं। पाश्चात्त्य विद्वानों ने नाटक की उत्पत्ति के सम्बन्ध में पुत्तलिका-नृत्य, स्वाँग, छायानाटक, वीरपूजा आदि के सिद्धान्त प्रस्तुत किए हैं।

नाटक के विकास के लिए अपेक्षित तत्त्व गीत, वाद्य, अभिनय, संवाद आदि की सत्ता वैदिक काल में भी थी। रामायण और महाभारत में नट, नर्तक, नाटक आदि के प्रयोग से सिद्ध होता है कि उस युग में भी नाटकों का प्रचलन था। ईसा पूर्व दूसरी शती में पतंजलि ने अपने महाभाष्य मे कंसवध और बलिबन्ध नामक नाटकों के खेले जाने का उल्लेख किया है। ईसा पूर्व पाँचवीं शती में पाणिनि ने अपनी अष्टाध्यायी में नटसूत्रों का उल्लेख किया है। अशोक के शिलालेखों में भी नट और समाज का उल्लेख मिलता है। इससे सिद्ध होता है कि भारत में नाट्य-परम्परा अत्यन्त प्राचीन काल से है।

संस्कृत नाट्यसाहित्य में सबसे प्राचीन रचनायें महाकवि भास की मिलती हैं। इनका समय चौथी-पाँचवीं शती ई.पू. के लगभग माना जाता है। इन्होंने तेरह नाटकों की रचना की जिनमें *स्वप्नवासवदत्त, प्रतिज्ञायौगन्धरायण, प्रतिमानाटक, पंचरात्र, दूतवाक्य, कर्णभार* आदि प्रसिद्ध हैं। इनके बाद शूद्रक का *मृच्छकटिक* उल्लेखनीय है।

महाकवि कालिदास का नाम संस्कृत नाट्यसाहित्य में सर्वोपरि है। इन्हें कविकुलगुरु भी माना जाता है। इनका *अभिज्ञानशाकुन्तलम्* अनेक भारतीय एवं पाश्चात्य भाषाओं में अनूदित हो चुका है। इसमें आदर्श भारतीय जीवन का वर्णन है। *मालविकाग्निमित्र* और *विक्रमोर्वशीय* कालिदास के दो अन्य प्रसिद्ध नाटक हैं। कालिदास की शैली सरल, सरस, मधुर, प्रसाद तथा लालित्य गुणों से सम्पन्न है।

कालिदास के बाद अश्वघोष, विशाखदत्त, दिङ्नाग, भट्टनारायण, भवभूति, हर्ष आदि का नाम संस्कृत नाट्य साहित्य में उल्लेखनीय है। इनमें भवभूति का नाम सर्वाधिक प्रसिद्ध है। उन्होंने तीन नाटकों की रचना की है– *मालतीमाधव, महावीरचरित* और *उत्तररामचरित*। इनमें उत्तररामचरित सर्वश्रेष्ठ है। यह वाल्मीकि रामायण के उत्तरकाण्ड की कथा पर आधारित है। इसमें करुण रस की अत्यन्त सुन्दर एवं मार्मिक निष्पत्ति देखने योग्य है। भवभूति में यद्यपि कालिदास की सी सरलता और सहजता नहीं है फिर भी नाट्य साहित्य में उन्हें कालिदास के समान ही सम्मान मिलता है। आदर्श वैवाहिक जीवन के चित्रण में भवभूति पारंगत हैं। राम और सीता के कोमल एवं पवित्र प्रेम का चित्रण भी उत्तररामचरित की विशिष्टता है।

संस्कृत नाटकों की प्रमुख विशेषता उनका सुखान्त होना है। सम्पूर्ण नाटक में यद्यपि सुख और दु:ख का सम्मिश्रण दृष्टिगोचर होता है, तो भी उसकी परिणति सुखान्त ही होती है। सुख के उपपादन के लिए ही नाटक में दु:ख का निष्पादन होता है। इसके पीछे भारतीय चिन्तन ही प्रधान कारण है। प्राचीन भारत के निवासी आशावादी थे। उनके अनुसार जीवन में दु:ख–क्लेश की परिणति सदैव सुख और परमानन्द में होती है।

संस्कृत नाटकों में संवाद के लिए प्राय: गद्य का ही प्रयोग होता है परन्तु रोचकता, प्रकृतिवर्णन, नीतिशिक्षा आदि के लिए पद्य के प्रयोग को महत्त्व दिया जाता है। संस्कृत के साथ–साथ प्राकृत भाषाओं का प्रयोग भी संस्कृत नाटकों में मिलता है। सभी प्रकार के पात्र संस्कृत समझते तो हैं, किन्तु अपने–अपने सामाजिक स्तर के अनुरूप संस्कृत या प्राकृत बोलते हैं। नायक के मित्र के रूप में विदूषक की कल्पना संस्कृत नाटकों की एक उल्लेखनीय विशेषता है। इन नाटकों में अभिनय सम्बन्धी संकेत, यथा – प्रकाशम्, स्वगतम्, जनान्तिकम्, सरोषम्, विहस्य इत्यादि सूक्ष्मता के साथ दिए जाते हैं। मनोरंजन के साथ–साथ नैतिकता और उच्च आदर्शों का जनमानस में संचार करना भी संस्कृत–नाटकों का एक लक्ष्य है। लौकिक और अलौकिक सभी प्रकार के पात्र इनमें होते हैं। प्रकृति–वर्णन भी संस्कृत–नाटकों की एक बहुत बड़ी विशेषता है।

प्रस्तुत संकलन की पृष्ठभूमि

संस्कृत के अखिल भारतीय महत्त्व को ध्यान में रखते हुए राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण परिषद् के तत्त्वावधान में वरिष्ठ माध्यमिक स्तर पर वैकल्पिक विषय के रूप में संस्कृत पढ़ने वाले छात्रों के लिए प्रस्तुत संकलन का संपादन किया गया है। इससे पूर्व एकादश, द्वादश वर्ग की कक्षाओं के लिए गद्य, पद्य एवं नाटक की स्वतन्त्र पुस्तकों का प्रावधान था। विगत वर्षों में परिषद् द्वारा प्रकाशित विद्यालयीय शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा तथा पाठ्यपुस्तकों की एक बार पुनः आमूल-चूल समीक्षा की गई। इस सन्दर्भ में थोड़ा विस्तार से बताने की आवश्यकता है।

विद्यालयीय शिक्षा के लिए दिल्ली स्थित 'राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान एवं प्रशिक्षण परिषद्' (एन.सी.ई.आर.टी.) द्वारा आयोजित संगोष्ठी में गहन विचार-विमर्श किया गया। उपस्थित अधिकारियों एवं विशेषज्ञ विद्वानों द्वारा समवेत रूप से **राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा-2005** के मानक लक्ष्यों का निर्धारण किया गया। इन लक्ष्यों में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है-भारमुक्त शिक्षा। विद्वानों का अनुभव है कि पाठ्यग्रन्थों के दुरूह भार से बोझिल छात्र, एक बिन्दु पर पहुँच कर पाठ्यक्रम को 'भार' मानने एवं अनुभव करने लगता है। पाठ्यक्रमों की विविधता, बहुलता तथा मात्राधिक्य – तीनों मिलकर छात्र की अध्ययन-अभिरुचि को प्रायः समाप्त ही कर देते हैं। अतः आवश्यक है कि छात्रों की अध्ययन-अभिरुचि को नित्य नवीन बनाने के लिए शिक्षा (के पाठ्यक्रम) को भारमुक्त किया जाये।

जब शिक्षा भारमुक्त होगी तो वह स्वयमेव एक 'आनन्दप्रद अनुभूति' सिद्ध होगी। यह पाठ्यचर्या-2005 का दूसरा लक्ष्य है। आनन्द तभी प्राप्त होता है जब किसी कार्य में उद्वेग न हो, अरुचि न हो, थकान न हो। शिक्षा के भारमुक्त होने पर ये गुण स्वतः उद्भूत होंगे और तब छात्र स्वयं अपने पाठ्यक्रमों में आकृष्ट एवं अनुरक्त होगा। इस आनन्दवृद्धि के लिए पाठ्यक्रम में ऐसे ज्ञान-सन्दर्भों का समावेश किया जाना चाहिए जिनमें उदात्त जीवन मूल्य हों, जिनमें घटना-वैचित्र्य के साथ ही साथ आधुनिक जनजीवन का प्रतिबिम्ब भी हो।

वस्तुतः शिक्षा एवं पाठ्यक्रम का यह पक्ष अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। देववाणी संस्कृत का वाङ्मय वेदों से प्रारम्भ होकर आधुनिक युग तक व्याप्त है। वस्तुतः यह वाङ्मय भारतवर्ष के पिछले पाँच हजार वर्षों का एक जीवन्त दस्तावेज है जिसमें राष्ट्र का इतिहास, भूगोल, दर्शन, संस्कृति, सामाजिक उथल-पुथल, नित्य परिवर्तनशील जनजीवन सब कुछ विद्यमान है।

ऐसी स्थिति में आवश्यक है कि प्राचीन ग्रन्थों से हम ऐसे ही अंश पाठ्यक्रम में समाविष्ट करें जिनमें आज का भी राष्ट्रीय एवं सामाजिक परिवेश समरस हो। श्रवण कुमार की मातृपितृभक्ति, हरिश्चन्द्र की सत्यनिष्ठा, वाल्मीकि-वर्णित ऋतुओं का शाश्वत सौन्दर्य तथा कथासरित्सागर, पञ्चतन्त्र, हितोपदेश एवं पुरुषपरीक्षा आदि प्राचीन ग्रन्थों की शिक्षाप्रद कहानियाँ इसी प्रकार की हैं। इनका सन्दर्भ सार्वकालिक है, अतः इनकी सम्प्रेषणीयता भी जैसी की तैसी है।

पाठ्यचर्या का तीसरा लक्ष्य भी यही निश्चित किया गया – जीवन के परिवेश से शिक्षा का घनिष्ठ सम्बन्ध। इस लक्ष्य की पूर्ति तभी हो सकेगी जब संकलित पाठांशों एवं आधुनिक जीवन-परिवेश के बीच सेतु हो, अन्तःसम्बन्ध हो।

पाठ्यचर्या का चौथा लक्ष्य निश्चित किया गया – शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार। इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए हमें यह ध्यान रखना होगा कि हमारी पाठ्यपुस्तकें सर्वथा निरवद्य हों, विवादमुक्त हों। संकलित पाठ राष्ट्रीय आदर्शों तथा संवैधानिक मान्यताओं के सर्वथा अनुकूल हों। पुरानी पाठ्यपुस्तकों में प्रायः 'मूलपाठ की रक्षा' के लोभवश उपर्युक्त तथ्यों की उपेक्षा की गई है। परन्तु आज का भारतीय समाज अत्यन्त संवेदनशील है। अतः यह ध्यान रखा ही जाना चाहिए कि किसी भी संकलित अंश से समाज के किसी भी वर्ग की भावना आहत न हो। पाठों से सर्वधर्म-समभाव, सर्वोदय तथा सामाजिक समानता आदि का समर्थन होना चाहिए। किसी भी वर्ग, जाति, समुदाय अथवा प्रवृत्ति की अवमानना नहीं होनी चाहिए और न ही किसी के प्रति प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रीति से कोई आक्षेप होना चाहिए।

पाठ्यचर्या का अन्तिम लक्ष्य अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है, विशेषकर संस्कृत पाठ्यक्रम के सन्दर्भ में! यह लक्ष्य है – छात्रों को चिन्तन के लिए प्रेरित करना। पाठ्यक्रम ऐसा बनाया जाना चाहिए जो छात्रों को स्वयं स्फूर्त बना सके। प्राय: शिक्षक छात्रों को 'निरुपाय' बनाता है यह कहकर कि 'कण्ठस्थ करने के अतिरिक्त और कोई उपाय नहीं।'

शब्दरूप एवं धातुरूप कण्ठस्थ करते-करते अधिकांश छात्र निराश, कुण्ठित एवं हतप्रभ होकर संस्कृताध्ययन से विरत हो जाते हैं। छात्रों में एक भ्रम-सा व्याप्त हो जाता है कि संस्कृत में सब कुछ रटने से ही सिद्ध होगा। जबकि ऐसा बिल्कुल नहीं है। कौन ऐसी भाषा है जिसमें छात्र महत्त्वपूर्ण अंशों को कण्ठस्थ नहीं करता? विद्या का कण्ठस्थ होना तो प्रशंसनीय बात है, इसकी निन्दा कैसी?

परन्तु संस्कृत भाषा में प्रवीण होने के लिए सब कुछ रट डालने की कोई आवश्यकता नहीं। आवश्यकता है तो केवल इस बात की कि छात्र सर्वत्र 'अध्यापकाश्रित' ही न हो। वह स्वयं भी कुछ सोचना विचारना अथवा करना सीखे। किसी पाठ को पढ़कर वह इतना समर्थ हो जाय कि पाठाश्रित लघु प्रश्नों का उत्तर दे सके, किसी अंश का आशय बता सके, रिक्त स्थानों की पाठ्यांश के आधार पर पूर्ति कर सके, प्रकृति-प्रत्यय का समुचित मेलन कर सके तथा योग्यता-विस्तार के अन्यान्य मानकों को भी आत्मसात् कर सके।

निष्कर्ष यह है कि संस्कृताध्यायी छात्र का संस्कृत के साथ नीर-क्षीर सम्बन्ध होना चाहिए न कि तिल-तण्डुलवत् संसृष्टि! यदि छात्र 'संस्कृतमय' नहीं हुआ, उसकी संस्कृत समझने, लिखने, बोलने की क्षमता विकसित नहीं हो पाई तो फिर संस्कृत पढ़ने का लाभ क्या हुआ? यह सब संभव है पाठ्यचर्या के उपर्युक्त लक्ष्यों को अपनाने से।

उपर्युक्त लक्ष्यों को चरितार्थ एवं अनुप्रयुक्त करने की दृष्टि से ही 'नवीन पाठ्यक्रम' की संकल्पना की गई तथा नये मानदण्डों के आधार पर छठी, नवीं, तथा ग्यारहवीं कक्षा के छात्रों के लिए नई पाठ्यपुस्तकों का निर्माण किया गया है। इन पुस्तकों का प्रमुख वैशिष्ट्य है-

क – प्राचीन ग्रन्थांशों के साथ ही साथ आधुनिक संस्कृत रचनाओं का भी समावेश।

ख – अन्य भारतीय भाषाओं के साहित्य की विविध अनूदित (संस्कृत) रचनाओं का भी पाठ्यक्रम में समावेश।

ग – पाठ्यचर्या के विविध लक्ष्यों की पूर्ति हेतु नये अभ्यास प्रश्नों, टिप्पणियों एवं योग्यता विस्तार–उपायों का समावेश।

घ – शिक्षण–संकेतों का निर्देश।

पाठ्यचर्या के लक्ष्यों को दृष्टि में रखकर सुधी प्राध्यापकों एवं विषय–विशेषज्ञों के समवेत प्रयास से निर्मित प्रस्तुत पाठ्यपुस्तक निश्चय ही संस्कृताध्ययन के क्षेत्र में एक शुभारम्भ है। यह पाठ्यक्रम संस्कृताधीती छात्रों में उन गुणों को विकसित करेगा जो पाठ्यचर्या के लक्ष्यरूप में विन्यस्त किये गये हैं।

पाठ्यपुस्तक–समिति के *मुख्यपरामर्शक के* रूप में हमें मार्गदर्शन मिला है संस्कृत के प्रख्यात विद्वान् प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी, अध्यक्ष, संस्कृत विभाग, डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर (म.प्र.) का जो श्रेष्ठ कवि, समीक्षक, अनेक पाठ्यग्रन्थ–निर्माता एवं अनुभव के ध नी कर्मठ विद्वान् हैं। *विशेषज्ञ विद्वान्* के रूप में हम लाभान्वित हुए हैं प्रो. राजेन्द्र मिश्र एवं प्रो. दीप्ति त्रिपाठी से जो पूर्व में भी राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण परिषद् की संस्कृत सम्बन्धी अनेक परियोजनाओं, संगोष्ठियों एवं उपक्रमों में अपना सक्रिय योगदान देते रहे हैं। समिति के अन्यान्य समस्त सदस्य भी विषय एवं भाषा के मर्मज्ञ, यशस्वी प्राध्यापक हैं।

प्रस्तुत संकलन में दस पाठ हैं। इनमें प्रथम पाठ **वेदामृतम्** में ऋग्वेद, यजुर्वेद एवं अथर्ववेद से मन्त्रों को संकलित किया गया है। विश्वशान्ति, विश्वबन्धुत्व और राष्ट्रप्रेम की दृष्टि से ये मन्त्र छात्रों के लिए एक अनुकरणीय आदर्श प्रस्तुत करते हैं।

द्वितीय पाठ **ऋतुचित्रणम्** में वाल्मीकिरामायण के किष्किन्धा, अरण्य एवं सुन्दर काण्डों से 12 श्लोक संकलित हैं। इनमें वसन्त, वर्षा,

शरद् एवं हेमन्त तथा चन्द्रोदय का अत्यन्त सुन्दर चित्रण है। प्रकृति–वर्णन की दृष्टि से ये श्लोक अत्यन्त मनोरम तथा हृदयावर्जक हैं। सम्पूर्ण विश्व में मात्र भारतवर्ष ही एक ऐसा दिव्य भूखण्ड है जहाँ समस्त ऋतुएँ अपने सांगोपांग वैभव–विलास के साथ बारी–बारी से आती हैं। प्रत्येक ऋतु में धरित्री का सारा परिवेश ही आमूल–चूल परिवर्तित हो उठता है।

तृतीय पाठ **परोपकाराय सतां विभूतयः** आर्यशूर प्रणीत **जातकमाला** से गृहीत है। इसमें मत्स्यरूप में अवतरित भगवान् बोधिसत्त्व (तथागत के पूर्वजन्मों की संज्ञा) के परोपकार की घटना का अत्यन्त मर्मस्पर्शी वर्णन किया गया है।

चतुर्थ पाठ **मानो हि महतां धनम्** पंचम वेद कहे जाने वाले महाभारत से संकलित किया गया है। क्षात्रधर्मरता विदुरा सिन्धुराज द्वारा पराजित तथा रणभूमि से पलायित अपने पुत्र को गर्हित करती हुई उसे विजय प्राप्ति हेतु प्रेरित करती है। यह पाठ हमें पुरुषार्थ एवं उद्योग की शिक्षा देता है।

पञ्चम पाठ **सौवर्णशकटिका** महाकवि शूद्रक–प्रणीत अमर नाट्यकृति **मृच्छकटिकम्** से संकलित है। सोने और माटी के शाश्वत द्वन्द्व की मर्मस्पर्शी व्याख्या करने वाले इस नाट्यांश में नाट्यनायक चारुदत्त के पुत्र रोहसेन की बालसुलभ लालसा का अत्यन्त मार्मिक चित्रण है।

षष्ठ पाठ **आहारविचारः**, चरक–संहिता के रसविमान नामक प्रथम अध्याय से लिया गया है। इसमें आहार–सामग्री के गुणों की वैज्ञानिक समीक्षा की गई है जो आज के रोगबहुल परिवेश में अत्यन्त उपादेय है।

सप्तम पाठ **सन्ततिप्रबोधनम्** महर्षि अरविन्द–प्रणीत संस्कृत खण्डकाव्य **भवानी–भारती** से संकलित है जिसमें पराधीन भारत–जननी द्वारा अपनी सन्तानों को स्वतन्त्रता प्राप्ति हेतु प्रेरित एवं प्रबोधित किया गया है।

अष्टम पाठ **दयावीर कथा** मैथिल–कोकिल विद्यापति–प्रणीत कथाकृति **पुरुषपरीक्षा** से संकलित है जिसमें शरणागतवत्सल रणथम्भौर नरेश परम हठी राव हम्मीर सिंह की दयावीरता का विलक्षण शिक्षाप्रद वर्णन किया गया है।

नवम पाठ **विज्ञाननौका** महाकवि प्रो. श्रीनिवास रथ के काव्यसंग्रह **'तदेव गगनं सैव धरा'** से संकलित है। इस कविता में पारम्परिक एवं नैसर्गिक सुख-सम्पदा की उपेक्षा कर विज्ञान-प्रदत्त असुखान्त सुविधाओं के अन्धमोह के प्रति कवि द्वारा जनता को सावधान किया गया है।

दशम पाठ **कन्थामाणिक्यम्** प्रो. अभिराजराजेन्द्रमिश्र प्रणीत एकांकी-संग्रह **रूपरुद्रीयम्** से संकलित है। कन्थामाणिक्य का अर्थ है **गुदड़ी का लाल**, जिसका इस एकांकी में नाम है-सोमधर। सोमधर एक शाकफलविक्रेता का बच्चा है जिसकी मित्रता अधिवक्ता भवानीदत्त के पुत्र सिन्धु से है। गरीब-अमीर की यह मैत्री पूर्वाग्रह - ग्रस्त भवानीदत्त को पसन्द नहीं। परन्तु दुर्घटनाग्रस्त सिन्धु के प्रति प्रदर्शित सोमधर के सदाचरण ने एक दिन भवानीदत्त का भी हृदय परिवर्तित कर दिया। वर्गद्वेष को समाप्त करने वाला यह एकांकी छात्रों को सत्पथ प्रदर्शित करता है।

एकादश पाठ **ईशः कुत्रास्ति** विश्वकवि रवीन्द्रनाथ टैगोर की **गीतांजलि** से संकलित है। संस्कृत में अनूदित रवीन्द्रनाथ की यह बंगला कविता उनके प्रगतिवादी एवं जनवादी दृष्टिकोण का परिचय कराती है जिसमें परमेश्वर को मन्दिर के गर्भगृह में ढूँढने की बजाय खेतों-खलिहानों में प्रत्यक्ष देखने का सन्देश दिया गया है।

द्वादश पाठ **गान्धिनः संस्मरणम्** गाँधीजी की मूल गुजराती आत्मकथा के संस्कृत रूपान्तर **सत्यशोधनम्** से लिया गया है। इसमें राष्ट्रपिता बापू ने, बचपन में देखे गये दो नाटकों 'पितृभक्त श्रवणकुमार एवं सत्य हरिश्चन्द्र' का अपने ऊपर विलक्षण प्रभाव स्वीकार किया है। पौराणिक कथा-पात्रों के इसी चारित्रिक भाव ने वस्तुतः उन्हें महामानव बनाया।

त्रयोदश पाठ **सत्त्वमाहो रजस्तमः** श्रीमद्भगवद्गीता के सप्तदश अध्याय **श्रद्धात्रयविभागयोग** से उद्धृत है। इस पाठ में सात्त्विक, राजसिक एवं तामसिक श्रद्धा, आहार, यज्ञ, तप एवं दान का वर्णन किया गया है, जिसका ज्ञान एक सन्तुलित एवं परिपक्व जीवन के लिए उपयोगी है।

अन्तिम चतुर्दश पाठ **नवद्रव्याणि** सप्तदश शतक के विशिष्ट दार्शनिक अन्नम्भट्ट विरचित **तर्कसंग्रह** ग्रन्थ से उद्धृत है, जिसमें न्याय एवं वैशेषिक दर्शन के मूलभूत सिद्धान्तों का संक्षिप्त वर्णन है। समग्र संसार में जो ज्ञान का विषय है वह सप्तविध है, जिसे पदार्थ कहा जाता है। पदार्थों के सात प्रकारों में प्रथम है– 'द्रव्य' जिसके पृथ्वी आदि नौ भेद हैं। उनका लक्षण इस पाठ में वर्णित है।

प्रस्तुत संकलन की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसमें संस्कृत भाषा के अतिप्राचीन, मध्यवर्ती तथा अतिनवीन– तीनों ही भाषा–रूपों एवं वाङ्मयों को एक साथ रखा गया है। इससे जहाँ छात्रगण संस्कृत के नूतन साहित्य से परिचित होंगे वहीं उनके अभिभावकों तथा अन्यान्य लोगों का यह भ्रम–निवारण भी होगा कि संस्कृत मात्र एक प्राचीन भाषा है जो अब कालातीत हो चुकी है। रवीन्द्र, अरविन्द, महात्मा गाँधी, श्रीनिवास रथ, अभिराजराजेन्द्र की मौलिक अथवा अनूदित रचनाओं से संस्कृत भाषा की अर्वाचीनता एवं जीवन्तता स्वतः सिद्ध हो जाती है।

संकलन के सभी पाठों में विभिन्न मानवीय भावों का कुशलता से चित्रण किया गया है। मानवमूल्यों की स्थापना, सहज आन्तरिक आकर्षण, परोपकार, बालमनोविज्ञान, आहार की महत्ता एवं प्रबन्धदक्षता की दृष्टि से ये पाठ छात्रों के लिए शिक्षाप्रद एवं उपयोगी हैं। इसके अतिरिक्त इस संकलन का उद्देश्य छात्रों को संस्कृत के प्रसिद्ध तथा महान् साहित्यकारों से परिचित करवाना भी है। इसके साथ–साथ उनकी सौन्दर्यानुभूति का विकास करवाना भी इस संकलन का लक्ष्य है।

संस्कृत साहित्य की विशाल परम्परा से इस संकलन में वेद, काव्य, गद्य तथा नाटक से प्रतिनिधिभूत अंश संकलित हैं। जिन ग्रन्थों से ये पाठ्यांश संकलित हैं उनका संक्षिप्त परिचय यहाँ दिया जा रहा है–

ऋग्वेदः– ऋग्वेदसंहिता में स्तुतिपरक तथा अर्चनाप्रधान मन्त्रों का संकलन किया गया है। यह विश्व का प्रथम व्यवस्थित उपलब्ध ग्रन्थ है जिसमें सप्तसिन्धु – प्रदेश में रहने वाले आर्यों के धार्मिक विचारों एवं दार्शनिक भावनाओं का काव्यात्मक चित्रण है। ऋग्वेद के समय में भारतवर्ष की जो सांस्कृतिक चेतना थी वह आज भी भारतीय मानस में

विद्यमान है। इससे संस्कृत की धारा के सतत प्रवाह की पुष्टि होती है। आर्यों की एक लम्बी बौद्धिक परम्परा का दिग्दर्शन ऋग्वेद में उपलब्ध होता है। वेद के सूक्तों के बहुत बड़े भाग में अग्नि, इन्द्र, सविता, रुद्र, मित्र, वरुण, सूर्य, मरुत् आदि देवताओं की प्रार्थना है। धार्मिक दृष्टि से रचित सूक्तों की संख्या इस संहिता में अवश्य ही सर्वाधिक है। यह मंडल, अध्याय तथा सूक्त रूप में विभक्त हैं। इसमें 10580 मन्त्र एवं 1028 सूक्त हैं।

यजुर्वेदः- इसमें यज्ञ में उपयोगी मन्त्रों का संकलन है। इस तरह यह अनुष्ठान-विषयक संहिता है। इन यज्ञों में दर्शपूर्णमास, अग्निहोत्र, चातुर्मास्य, सोमयाग, वाजपेय, राजसूय, अश्वमेध आदि प्रमुख हैं। यजुर्वेद में कुछ मन्त्र पद्यात्मक हैं तथा कुछ गद्यात्मक हैं। गद्यात्मक मन्त्र राष्ट्रीय भावना से ओत-प्रोत हैं। कर्मकाण्ड में उपयोगी होने के कारण यजुर्वेद अन्य सभी वेदों की अपेक्षा अधिक लोकप्रिय है।

सामवेदः- इस संहिता से कोई मन्त्र तो नहीं लिया गया है फिर भी सामान्य परिचय की अपेक्षा से यहाँ उल्लेख कर दिया गया है। सामवेद का महत्त्व संगीत की दृष्टि से बहुत अधिक है। इससे ज्ञात होता है कि भारतीय संगीत का उद्भव किन स्रोतों से हुआ।

अथर्ववेदः- अथर्ववेद के मन्त्रों का द्रष्टा ऋषि अथर्वा है। यह वेद 20 काण्डों में विभक्त है। इस वेद में मारण, मोहन, वशीकरण, उच्चाटन, ओषधि, राजनीति, राज्य पालन और ईश्वराराधन के बड़े ही उपयोगी मन्त्र संगृहीत हैं। अथर्ववेद को सर्वाधिक मानवोपयोगी वेद माना गया है। जीवन के प्रायः सभी पक्षों का स्पर्श इसमें हुआ है, किन्तु विशेष रूप से तत्कालीन विश्वासों एवं प्रचलित तन्त्र-मन्त्र आदि का प्रकाशन इसमें अधिक है। इसी क्रम में अभिचार से संबद्ध क्रियाओं का निरूपण है। शत्रुनाश, आरोग्य-प्राप्ति, गृह-सुख, भूत-प्रेतों का निवारण, कीट-पतंगों का नाश, इष्ट वस्तु का लाभ, विवाह, वाणिज्य, पितृपूजा आदि का विवेचन अथर्ववेद के मन्त्रों में है। विविध रोगों का स्वरूप बतलाकर उनके निवारण की व्यापक विधि भी इसमें दी गई है।

रामायणः- रामायण के रचयिता महर्षि वाल्मीकि संस्कृत काव्य

के आदिकवि माने जाते हैं और उनकी कृति आदिकाव्य। इसमें मर्यादापुरुषोत्तम राम का पावन चरित वर्णित है। यह काव्यकृति सात कांडों में विभक्त है और इसमें 24,000 श्लोक हैं। कई अर्थों में यह कृति संस्कृत-कविता के नवीन युग का सूत्रपात करती है। महर्षि वाल्मीकि ने एक ओर तो संस्कृत कविता के उच्च मानवीय जीवन-मूल्य प्रस्तुत किए हैं, तो दूसरी ओर कविता के नये कलात्मक रूपों का भी सूत्रपात किया है।

लोक-जीवन का मर्मस्पर्शी चित्रण, उदात्त जीवन-मूल्य, जड़-चेतन का समन्वय तथा विविध सांस्कृतिक धाराओं का सम्मिश्रण रामायण के प्रमुख प्रतिपाद्य बिन्दु हैं। रामायण के नायक मर्यादापुरुषोत्तम की पितृभक्ति, भ्रातृस्नेह, शरणागतप्रेम, मैत्रीभाव आदि दिव्यगुण भारतीय संस्कृति के निर्माण में अतीव सहायक सिद्ध हुए हैं। इस तरह राम का पावन चरित्र परवर्ती युग में उदात्त जीवनादर्शों का आधार बनता चला गया और इस आदिकाव्य को उत्तरोत्तर जनप्रिय बनाता गया है।

महाभारतः- यह महर्षि वेदव्यासप्रणीत अद्भुत काव्यग्रन्थ है। इसको पुराण भी कहा जाता है। इतिहास का भी इसमें अलौकिक समावेश है। वाल्मीकिरामायण की भाँति इसमें अधिकतर अनुष्टुप् छन्द का प्रयोग किया गया है। इसके विषय में सूक्ति प्रसिद्ध है *'यदिहास्ति तदन्यत्रयन्नेहास्तिनतत्क्वचित्'* अर्थात् इस ग्रन्थ में सभी प्रकार के साहित्यिक तत्त्वों का समावेश है। जो इसमें है वही अन्यत्र है। इससे भिन्न कुछ और नहीं है। महाभारत को विविध सूचनाओं का विश्वकोष भी कहा गया है क्योंकि इसमें धर्म, दर्शन, अध्यात्म, साहित्य, पुराण, इतिहास एवं कला सब कुछ विद्यमान हैं। विश्ववाङ्मय का रत्नभूत श्रीमद्भगवद्गीता भी इसी महाभारत का अंश हैं। विदुरनीति जैसे नीतिग्रन्थ तथा विष्णुसहस्रनाम जैसा पवित्र-पावन स्तोत्र भी महाभारत के ही अंश हैं। वस्तुतः शतसाहस्री संहिता के रूप में विख्यात यह महान् ग्रन्थ भारतीय संस्कृति का एक कालजयी दस्तावेज है।

जातकमालाः- आर्यशूर ने तीसरी-चौथी शती में संस्कृत में जातकमाला की रचना की। इसमें कुल 34 जातक हैं। 'जातक' शब्द का अर्थ है पूर्व

जन्म सम्बन्धी कथा। इन जातकों में बोधिसत्त्व के पूर्वजन्म के सद् वृत्तान्तों की कथा सरल, गद्यमय संस्कृत में उपनिबद्ध है। लोक-कल्याण एवं परोपकार की भावना को प्रतिपादित करने वाली इन कथाओं के माध्यम से बौद्ध विद्वान् आर्यशूर ने बौद्ध सिद्धान्तों की स्थापना के लिए ही इस ग्रन्थ की रचना की है।

मृच्छकटिकः- संस्कृत नाट्य-साहित्य में शूद्रक और उनकी नाट्यकृति मृच्छकटिक का महत्त्वपूर्ण स्थान है। विश्व की विभिन्न भाषाओं में इस नाटक का अनुवाद हो चुका है। इस नाटक की प्रमुख विशेषता यह है कि इसके पात्र कालिदास तथा भवभूति के पात्रों की तरह विशुद्ध भारतीय न होकर विश्व के नागरिक हैं। दरिद्र चारुदत्त, सदाचारिणी गणिका वसन्तसेना, वीर शर्विलक तथा उन्मत्त शकार ऐसे व्यक्ति हैं जो विश्व के हर समाज में मिलते हैं। मृच्छकटिक में सामाजिक जीवन का यथार्थ चित्रण है।

चरकसंहिताः- चरकप्रणीत यह ग्रन्थ चिकित्साशास्त्र का प्रसिद्ध एवं प्राचीन ग्रन्थ है। इस संहिता में आहार, रोग, रोग-विज्ञान, शरीर-विज्ञान, भ्रूण-विज्ञान, निदान, विशेष एवं सामान्य चिकित्सा का विज्ञान वर्णित है। यह रचना गद्य एवं पद्य दोनों में है।

भवानीभारतीः- महान् क्रान्तिकारी तथा सशस्त्र क्रान्ति द्वारा भारत की आजादी हासिल करने का स्वप्न देखने वाले श्री अरविन्द घोष द्वारा 99 पद्यों से युक्त यह खण्डकाव्य सन् 1906 ई. में कलकत्ता के अलीपुर कारागर में लिखा गया था। बालक अरविन्द एक रात स्वप्न में वन्दिनी भारतमाता का प्रत्यक्ष दर्शन भगवती महाकाली के रूप में करता है। वह बेड़ियों में जकड़ी है। भगवती के रूप में भारत माता अरविन्द को लक्ष्य बनाकर अपनी सन्ततिभूता भारतीय जनता को, उसके स्वर्णिम अतीत का स्मरण कराते हुए, स्वतन्त्रता प्राप्ति हेतु प्रेरित करती है। असीम राष्ट्रभक्ति-भावना से पूरित यह खण्डकाव्य स्वाधीनता-संग्राम के दिनों में जन-जन का कण्ठहार बन गया तथा ब्रिटिश शासन द्वारा जब्त कर लिया गया था। स्वतन्त्रता-प्राप्ति के अनन्तर पुनः इसका प्रकाशन तथा प्रचार-प्रसार हुआ है।

पुरुषपरीक्षा:– 'मैथिलकोकिल' पदवी से विभूषित महाकवि विद्यापति (1350–1452) प्रणीत यह कथाग्रन्थ विविधकोटिक उदात्त आदर्शों की प्रतिष्ठापना करता है। मिथिला–नरेश कीर्तिसिंह, शिवसिंह, पद्मसिंह, नरसिंह, धीरसिंह तथा भैरवसिंह के राज्यकाल में राजकवि के पद पर अधिष्ठित, संस्कृत–प्राकृत–अवहट्ट तथा मैथिली भाषाओं में समान गति से साहित्य–संरचना करने वाले विद्यापति निश्चय ही एक कालजयी साहित्यकार थे। उन्होंने प्राय: उन्नीस ग्रन्थों का प्रणयन किया।

महाराज शिवसिंह देव के निर्देश पर विद्यापति ने दण्डनीति–विषयक कथाकृति **पुरुषपरीक्षा** की रचना की–

तस्य श्री शिवसिंहदेवनृपतेर्विज्ञप्रियस्याज्ञया
ग्रन्थं ग्रन्थिलदण्डनीतिविषये विद्यापतिर्व्यातनोत्॥

पुरुषपरीक्षा के चार परिच्छेदों में क्रमश: आठ, सात, चौदह तथा पन्द्रह कथायें संकलित हैं। चौथे परिच्छेद की कथायें धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष शीर्षकों में विभक्त हैं। प्रस्तुत संकलन में स्थानापन्न **दयावीरकथा** पुरुषपरीक्षा के प्रथम परिच्छेद से संगृहीत है। इसमें शरणागत मीर महिमाशाह की रक्षा के लिए सुल्तान अलाउद्दीन के कोपभाजन राव हम्मीर सिंह द्वारा आत्मोत्सर्ग करने का मर्मस्पर्शी वर्णन है।

तदेव गगनं सैव धरा:– उत्कल की पवित्र धरती में 1933 में जन्मे प्रो. श्रीनिवास रथ का सम्पूर्ण जीवन उत्तर भारत के विविध अंचलों में बीता। सर्वाधिक कालयापन उन्होंने भगवान् महाकाल की मोक्षदा पुरी उज्जयिनी में किया जहाँ वह विक्रम विश्वविद्यालय में संस्कृत–विभाग में आचार्य एवं अध्यक्ष रहे। व्याकरण, साहित्यादि ग्रन्थों का पारम्परिक ज्ञान प्रो. रथ को अपने विद्वान् पितृचरण से प्राप्त हुआ जो मुरेना के संस्कृत महाविद्यालय में लब्धप्रतिष्ठ आचार्य थे। प्रो. रथ ने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से संस्कृत में एम. ए. किया।

राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान, नई दिल्ली द्वारा 1995 ई. में प्रकाशित प्रो. रथ का गीत–संग्रह **तदेव गगनं सैव धरा** अर्वाचीन संस्कृत वाङ्मय की एक उत्कृष्ट कृति है जिसमें देशभक्ति, राष्ट्रीय एकता, उद्बोधन, शौर्य, आधुनिक सामाजिक मूल्य तथा भक्तिभावना आदि विषयों से जुड़े

41 गीत हैं जो अत्यन्त सरल, मधुर, लयवाही तथा भावप्रवण हैं। 'विज्ञाननौका' शीर्षक गीत में विज्ञान एवं प्रकृति के बीच सन्तुलन स्थापित करने का संकल्प व्यक्त किया गया है।

रूपरुद्रीयम्:– वाङ्मय की काव्य, नाट्य, कथा एवं समीक्षा–चारों ही विधाओं में मात्रा एवं गुणवत्ता–दोनों ही दृष्टियों से उत्कृष्ट रचना करने वाले 'त्रिवेणीकवि' के रूप में प्रतिष्ठित प्रो. अभिराज राजेन्द्र मिश्र का जन्म 1943 ई. में जौनपुर जनपद (उ.प्र.) के द्रोणीपुर ग्राम में पं. दुर्गाप्रसाद मिश्र एवं महीयसी अभिराजी देवी के मध्यमपुत्र के रूप में हुआ। इलाहाबाद तथा शिमला विश्वविद्यालयों में अध्यापनरत, बालीद्वीपीय उदयन विश्वविद्यालय (इण्डोनेशिया) में विजिटिंग प्रोफेसर तथा अन्ततः सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी के यशस्वी कुलपति रहे प्रो. मिश्र ने अब तक दो महाकव्य, पन्द्रह खण्डकाव्य, छः गीतसंग्रह, दस एकांकी–संग्रह, तीन कथासंग्रह एवं अनेक समीक्षाग्रन्थ प्रकाशित किये हैं।

रूपरुद्रीयम्:– प्रो. मिश्र–प्रणीत ग्यारह एकांकियों का संग्रह है, जिनमें पौराणिक, ऐतिहासिक तथा मनोवैज्ञानिक के साथ ही साथ सामाजिक एकांकी भी संकलित हैं जिनमें दहेज–समस्या, दस्यु–उन्मूलन–समस्या तथा जातीय विद्वेष–शमन आदि समस्याओं को समाधान के साथ चित्रित किया गया है। **कन्थामाणिक्यम्** का नायक सोमधर एक ऐसा ही उदात्त पात्र है जो अपनी सदाशयता से अधिवक्ता भवानीदत्त की द्वेषदृष्टि को समाप्त करने में सफल होता है।

गीताञ्जलिः– विश्वकवि रवीन्द्रनाथ टैगोर को गीताञ्जलि के लिए विश्वप्रसिद्ध नोबल पुरस्कार प्राप्त हुआ था। ये गीत मूलतः बँगला भाषा में लिखे गये थे तथा कालान्तर में अंग्रेजी में अनूदित किये गये थे। आध्यात्मिकता से ओतप्रोत ये गीत मानव संचेतना को किसी परोक्षानुभूति से जोड़ते हैं जो सर्वव्यापी एवं सर्वशक्तिमान है।

काव्य, नाट्य, कथादि विधाओं में पुष्कल साहित्यसृष्टि करने वाले रवीन्द्र बाबू एक महान् चित्रकार भी थे। शान्ति निकेतन की स्थापना कर उन्होंने भारतीय गुरुकुल–परम्परा को शिक्षा के क्षेत्र में पुनः प्रतिष्ठापित

किया। **ईशः कुत्रास्ति** शीर्षकगीत इसी गीतांजलि से संकलित है। इसमें ईश्वर को मन्दिरों में ही नहीं, खेतों–खलिहानों तथा दरिद्रों में भी व्याप्त बताया गया है। वस्तुतः यह जनवादी गीत है।

सत्यशोधनम्:– राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी का (1869–1948) लेखन के क्षेत्र में अद्‌भुत योगदान रहा है। उन्होंने अपनी आत्मकथा सर्वप्रथम अपनी मातृभाषा गुजराती में लिखी तथा पं. श्रीनिवास शास्त्री के सहयोग से स्वयमेव उसका संशोधन भी किया। कालान्तर में विश्व की अनेक भाषाओं में उसका रूपान्तर हुआ। संस्कृत में 'सत्यशोधनम्' शीर्षक से उसका रूपान्तर पण्डित होसकेरे नागप्पा शास्त्री ने किया।

गाँधीजी का एक विशिष्ट संस्मरण उसी आत्मकथा से संकलित है जिसमें उन्होंने श्रवण की पितृभक्ति एवं हरिश्चन्द्र की सत्यनिष्ठा से प्रभावित होने की बात स्वीकार की है।

पुस्तक के आरम्भ में दी गई इस भूमिका द्वारा छात्रों को संस्कृत साहित्य की विभिन्न विधाओं के विकास के संक्षिप्त इतिहास का परिचय करवाया गया है। इसके साथ–साथ निर्धारित पाठों के मूलग्रन्थ एवं उनसे संबन्धित साहित्यकारों का परिचयात्मक ज्ञान भी इसमें समाविष्ट है। पाठ के आरम्भ में पाठ–संदर्भ दिया गया है जिससे संकलित अंश का प्रसंग सरलता से छात्रों को बोधगम्य हो सके। कक्षा में छात्रों को सीखने के अधिक अवसर प्रदान करने के लिए पाठों के अंत में विविध अभ्यास प्रश्न भी दिए गए हैं। पुस्तक में आए छन्दों तथा अलंकारों का परिचय भी परिशिष्ट 1 तथा 2 में दिया गया है।

प्रस्तुत संकलन की पांडुलिपि को तैयार करने के लिए समय–समय पर आयोजित कार्यगोष्ठियों में भाग लेने वाले जिन विषय–विशेषज्ञों एवं संस्कृत अध्यापकों का मार्गदर्शन तथा सहयोग सुलभ हुआ है, संपादक उन सभी विद्वानों के प्रति हार्दिक आभार व्यक्त करता है। यद्यपि इस संकलन को यथासंभव छात्रोपयोगी एवं स्तर के अनुरूप बनाने का प्रयास किया गया है तथापि इसे छात्रों के लिए और अधिक उपयोगी बनाने के लिए अनुभवी संस्कृत अध्यापकों के बहुमूल्य सुझावों का हम सदैव स्वागत करेंगे।

शिक्षकों से निवेदन

शिक्षणकार्य में शिक्षण सामग्री के साथ शिक्षणविधि भी महत्वपूर्ण है। अतः शिक्षक–बन्धुओं से निवेदन है कि प्रस्तुत पाठ्यपुस्तक के पाठों का शिक्षण करते समय निम्नलिखित शिक्षणबिन्दुओं को ध्यान में रखें, ताकि शिक्षण रुचिकर एवं प्रभावोत्पादक हो सके।

1. वेदमन्त्रों के अध्यापन में मन्त्रों का सस्वर वाचन आवश्यक है। वैदिक मन्त्रों में जो शब्द लौकिक भाषा से पृथक् प्रतीत हों, उनकी रचना के विषय में छात्रों को विशेष रूप से अवगत करायें तथा मन्त्रों का पद–पाठ भी स्पष्ट करें। मन्त्रों का अर्थ करते समय अभिधार्थ की अपेक्षा निर्वचन प्रक्रिया से प्राप्त अर्थविशेष को समझाएँ। वैदिक भाषा में उपसर्ग, धातु एवं पदों से पृथक् भी लिखे जाते हैं। अतः मन्त्रों का अर्थज्ञान कराते हुए इसका विशेष ध्यान रखा जाय।
2. **'ऋतुचित्रणम्'** पाठ का अध्यापन करते समय आदिकाव्य रामायण का परिचय छात्रों को अवश्य करायें। पाठगत अनुष्टुप् उपजाति आदि छन्दों का ज्ञान व सस्वर वाचन भी करायें। इस पाठ के अभ्यास में ऋतुसंहार से पद्य दिये गये हैं, उनका भी भाव समझाकर सस्वर पाठ करायें। ऋतुओं पर अन्य भाषाओं में मिलने वाली कविताओं के उदाहरण भी इसके अध्यापन में दिये जा सकते हैं।
3. महाभारत एक उपजीव्य काव्य है, जिसके विषय में कहा गया है, *'यदिहास्तितदन्यत्रयन्नेहास्तिनतत्क्वचित्।'* छात्रों को महाभारत का विशिष्ट परिचय देते हुए महर्षि वेदव्यास के व्यक्तित्व एवं कृतित्व से छात्रों को अवगत करायें। **'मानो हि महतां धनम्'** पाठ के माध्यम से छात्रों को नैतिक मूल्यों के प्रति जागरूक करें।
4. बौद्धसाहित्य के अन्तर्गत जातकग्रन्थमाला का विशिष्ट स्थान है। अतः जातक ग्रन्थों का परिचय देते हुए प्रस्तुत कथा **'परोपकाराय सतां विभूतयः'** के माध्यम से सत्य, तप और अहिंसा आदि नैतिक गुणों के प्रति छात्रों में रुचि उत्पन्न करें।
   कथा शिक्षण की विधि का उपयोग करते हुए गद्य का आदर्शवाचन एवम् अनुकरण वाचन का भी छात्रों को अभ्यास करायें।

5. **'सौवर्णशकटिका'** पाठ के माध्यम से रूपक के एक प्रकार का छात्रों को परिचय दें तथा छात्रों में अभिनय कला के प्रति अभिरुचि उत्पन्न करें एवं अभिनय का अभ्यास करायें। मृच्छकटिक प्रकरण की कहानी रोचक बना कर बच्चों को बतायें। प्रकरण का नायक धीरललित होता है। अतः उसके चारित्रिक गुणों से छात्रों को अवगत करायें।
6. चरक पाणिनि से पूर्ववर्ती लेखक हैं। अतः शब्दों का केवल व्युत्पत्तिपरक अर्थ न लेकर भावप्रधान अर्थ को प्राथमिकता दें। प्रस्तुत पाठ **'आहारगुणाः'** के माध्यम से आहार की गुणवत्ता एवं स्वास्थ्यवर्धक भोजनप्रक्रिया छात्रों को अपनाने पर बल दें।
7. **'सन्ततिप्रबोधनम्'** पाठ का अध्यापन करते समय महान् दार्शनिक एवं राष्ट्रभक्त महर्षि अरविन्द के जीवनदर्शन से छात्रों का परिचय करायें। छात्रों में राष्ट्रभक्ति की भावना को जागृत करें।
8. **विद्यापति** मैथिली भाषा के प्रसिद्ध कवि हैं। इनकी संस्कृत में भी अनेक रचनाएँ हैं। अतः प्रस्तुत **'दयावीरकथा'** के शिक्षण के समय छात्रों को रचना की ऐतिहासिकता एवं गद्यात्मकता से अवगत करायें। अलाउद्दीन खिलजी और हम्मीर के विषय में यह कथा किन तथ्यों से परिचित कराती है–इस पर विचार करते हुए छात्रों को इतिहास बोध की दृष्टि से साहित्य के अध्ययन की दिशा में प्रेरित करें।
9. विज्ञान वरदान के साथ अभिशाप भी है। प्रस्तुत कविता **'विज्ञाननौका'** के माध्यम से छात्रों को ज्ञान और विज्ञान के विवेक से परिचित करायें।
10. गुण गुणज्ञों के द्वारा ही जाने जाते हैं। आधुनिक प्रसिद्ध कवि अभिराज प्रो. राजेन्द्र मिश्र ने **'कन्थामाणिक्यम्'** एकांकी में दर्शाया है कि गुणी कहीं भी उत्पन्न हो सकता है। प्रस्तुत पाठ के माध्यम से संस्कृत में रचे जा रहे नये साहित्य से छात्रों को अवगत करायें कि संस्कृत आज भी जीवन्त भाषा है।
11. अन्यान्य भाषाओं से भी अनूदित संस्कृत रचनाएँ आजकल प्रचुर रूप में उपलब्ध हैं। कवीन्द्र रवीन्द्रनाथ टैगोर की विख्यात रचना

गीताञ्जलि का अनुवाद उक्त तथ्य को प्रमाणित करता है। प्रस्तुत रचना **'ईशः कुत्रास्ति'** का शिक्षण करते समय छात्रों को श्रमशीलता के प्रति जागरूक करें। प्रस्तुत गीतिका के गायन का कक्षा में अभ्यास करायें। रवीन्द्रनाथ की संस्कृत में अनूदित अन्य रचनाओं को पढ़ने के लिए विद्यार्थियों को प्रोत्साहित करें।

12. गाँधीजी की आत्मकथा का अनेक भाषाओं में अनुवाद किया गया है। संस्कृत भाषा में **'सत्यशोधनम्'** के नाम से प्रकाशित आत्मकथा में मातृभक्ति, पितृभक्ति, सत्यनिष्ठा आदि गुणों का चित्रण किया गया है। पाठ के आधार पर छात्रों द्वारा गाँधीजी के गुणों का चित्रण कराया जाय।
13. जीवन में हम जो कुछ कार्य करते हैं वह त्रिगुणात्मक है- सात्त्विक, राजसिक एवं तामसिक। इनका ज्ञान हमारे लिए विशेषकर छात्रों के लिए नितान्त आवश्यक है, ताकि वे अपने विचार व व्यवहार अधिकाधिक सात्त्विक रखने के लिए प्रयास करें। इस बात को शिक्षक अनेक प्रसंगों से जोड़ते हुए छात्रों से विचार विमर्श करें एवं छात्रों से प्रतिफलन देखें।
14. **नवद्रव्याणि** पाठ में आए हुए अधिकांश शब्द पारिभाषिक हैं जिनका सामान्य भाषा में अर्थ अलग है, इस बात का ध्यान जरूर रखें एवं शिक्षक छात्रों से इस पर चर्चा करें। इससे छात्रों का भाषिक अभ्यास होने के साथ-साथ विषय अधिक स्पष्ट हो सकता है। उदाहरण- पदार्थ, द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य इत्यादि।

विषयानुक्रमणिका

		पृष्ठाङ्काः
पुरोवाक्		*v*
भूमिका		*ix*
प्रथमः पाठः	वेदामृतम्	1
द्वितीयः पाठः	ऋतुचित्रणम्	6
तृतीयः पाठः	परोपकाराय सतां विभूतयः	13
चतुर्थः पाठः	मानो हि महतां धनम्	20
पञ्चमः पाठः	सौवर्णशकटिका	25
षष्ठः पाठः	आहारविचारः	31
सप्तमः पाठः	सन्ततिप्रबोधनम्	36
अष्टमः पाठः	दयावीर-कथा	43
नवमः पाठः	विज्ञाननौका	50
दशमः पाठः	कन्थामाणिक्यम्	56
एकादशः पाठः	ईशः कुत्रास्ति	68
द्वादशः पाठः	गान्धिनः संस्मरणम्	73
त्रयोदशः पाठः	सत्त्वमाहो रजस्तमः	78
चतुर्दशः पाठः	नवद्रव्याणि	87
परिशिष्ट		
	1. छन्द	94
	2. अलङ्कार	98
	3. अनुशंसित ग्रन्थ	102

भारत का संविधान

भाग 4क

नागरिकों के मूल कर्तव्य

अनुच्छेद 51 क

मूल कर्तव्य – भारत के प्रत्येक नागरिक का यह कर्तव्य होगा कि वह –

(क) संविधान का पालन करे और उसके आदर्शों, संस्थाओं, राष्ट्रध्वज और राष्ट्रगान का आदर करे;

(ख) स्वतंत्रता के लिए हमारे राष्ट्रीय आंदोलन को प्रेरित करने वाले उच्च आदर्शों को हृदय में संजोए रखे और उनका पालन करे;

(ग) भारत की संप्रभुता, एकता और अखंडता की रक्षा करे और उसे अक्षुण्ण बनाए रखे;

(घ) देश की रक्षा करे और आह्वान किए जाने पर राष्ट्र की सेवा करे;

(ङ) भारत के सभी लोगों में समरसता और समान भ्रातृत्व की भावना का निर्माण करे जो धर्म, भाषा और प्रदेश या वर्ग पर आधारित सभी भेदभावों से परे हो, ऐसी प्रथाओं का त्याग करे जो महिलाओं के सम्मान के विरुद्ध हों;

(च) हमारी सामासिक संस्कृति की गौरवशाली परंपरा का महत्त्व समझे और उसका परिरक्षण करे;

(छ) प्राकृतिक पर्यावरण की, जिसके अंतर्गत वन, झील, नदी और वन्य जीव हैं, रक्षा करे और उसका संवर्धन करे तथा प्राणिमात्र के प्रति दयाभाव रखे;

(ज) वैज्ञानिक दृष्टिकोण, मानववाद और ज्ञानार्जन तथा सुधार की भावना का विकास करे;

(झ) सार्वजनिक संपत्ति को सुरक्षित रखे और हिंसा से दूर रहे;

(ञ) व्यक्तिगत और सामूहिक गतिविधियों के सभी क्षेत्रों में उत्कर्ष की ओर बढ़ने का सतत प्रयास करे, जिससे राष्ट्र निरंतर बढ़ते हुए प्रयत्न और उपलब्धि की नई ऊँचाइयों को छू सके; और

(ट) यदि माता-पिता या संरक्षक है, छह वर्ष से चौदह वर्ष तक की आयु वाले अपने, यथास्थिति, बालक या प्रतिपाल्य को शिक्षा के अवसर प्रदान करे।

प्रथमः पाठः

वेदामृतम्

भारतीय वैदिक वाङ्मय संपूर्ण विश्व का प्राचीनतम वाङ्मय होने के साथ मनुष्य की अंतश्चेतना से फूटी उदात्त कविता का भी प्रथम निदर्शन है। वैदिक काव्य में विश्वशान्ति, विश्वबन्धुत्व, लोकतान्त्रिक मूल्य, निर्भयता तथा राष्ट्रप्रेम का सन्देश भरा पड़ा है जो आज के वातावरण में पहले से भी अधिक प्रासंगिक प्रतीत होता है।

प्रस्तुत पाठ में वैदिक काव्य का अमृततत्व ऋग्वेद, यजुर्वेद तथा अथर्ववेद से संकलित किया गया है। इन कविताओं में अत्यन्त उदात्त एवं अनुकरणीय आदर्श विद्यमान है।

सङ्गच्छध्वं सं वदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।
देवा भागं यथा पूर्वे सञ्जानाना उपासते॥1॥ (*ऋ. 10-191-2*)

समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः।
समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति॥2॥ (*ऋ. 10-191-4*)

मधु वाता ऋतायते मधु क्षरन्ति सिन्धवः।
माध्वीर्नः सन्त्वोषधीः॥3॥ (*ऋ. 1-90-7*)

यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं
तदु सुप्तस्य तथैवैति।
दूरङ्गमञ्ज्योतिषां ज्योतिरेकं
तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु॥4॥ (*यजु. 34.1*)

तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्
पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतम्।
शृणुयाम शरदः शतं प्रब्रवाम शरदः शतम्
अदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात्॥5॥

(*यजु. 36-24*)

जनं बिभ्रती बहुधा विवाचसम्
नानाधर्माणं पृथिवी यथौकसम्।
सहस्रं धारा द्रविणस्य मे दुहां
ध्रुवेव धेनुरनुपस्फुरन्ती॥6॥ (*अथर्ववेदः पृथिवीसूक्तम् 12.1.45*)

शब्दार्थाः टिप्पण्यश्च

सङ्गच्छध्वम्	–	सङ्गताः संभूताः भवत (सम् पूर्वक गम् धातु आत्मनेपद लोट् लकार म.पु., बहु.व.), साथ चलें।
संवदध्वम्	–	परस्परं विरोधं परित्यज्य एकविधमेव वाक्यं ब्रूत इति, परस्पर विरोध छोड़कर समान स्वर से एक समान बोलें।
वः (युष्माकम्)	–	तुम्हारा।
मनांसि	–	मन।
संजानताम्	–	समानमेकरूपमेवार्थम् अवगच्छन्तु, समान रूप से अर्थ बोध करें।
पूर्वे देवाः	–	पुरातनाः देवाः, पूर्वकाल के देवगण।
सञ्जानानाः	–	ऐकमत्यं प्राप्ताः, एकमत होकर।
भागम् उपासते	–	हवि के भाग को स्वीकार करते हैं।
आकूतिः	–	संकल्पः, अध्यवसायः, संकल्प।
समाना	–	समानानि, एकविधानि, समान।
सुसह	–	शोभनं साहित्यम्, संगति।
असति	–	भवतु (तुम्हारी सुन्दर संगति हो जाए)।
मधु	–	माधुर्योपेतम्, माधुर्य से भरी।
ऋतायते	–	ऋतं (यज्ञं) आत्मनः इच्छते यजमानाय, अपने लिए यज्ञ की कामना करने वाले यजमान के लिए।

सिन्धवः	–	नद्यः, समुद्राः वा, नदियाँ अथवा समुद्र।
ओषधीः	–	फलपाकान्ता ओषधयः, फल के पकने पर जो पौधे नष्ट हो जाते हैं, उन्हें ओषधि कहते हैं।
जाग्रतः	–	जागते हुए के।
दूरम् उदैति	–	दूर भाग जाता है।
तदु दैवम् (मनः)	–	तद् दिव्यज्ञानयुक्तं मनः, वही दिव्य विज्ञान युक्त मन।
ज्योतिषाम्	–	इन्द्रियाणाम्, विषयों का प्रकाशन करने वाली इन्द्रियों में।
दूरं गमम्	–	सर्वाधिक दूर तक पहुँचने वाली, एकमात्र प्रकाशक।
शिवसंकल्पम्	–	शिवाः संकल्पाः यस्य तत्, मंगलमय, कल्याणकारी विचारवाला।
देवहितम्	–	देवैः स्थापितम्, देवताओं द्वारा स्थापित।
शुक्रम्	–	दिव्य, चमकीला।
चक्षुः	–	नेत्र, सूर्य।
पुरस्तात्	–	पूर्वदिशायाम्, पूर्व दिशा में समक्ष।
उच्चरत्	–	उदितः जातः, उदय हुआ है।
शरदः	–	वर्ष।
शतम्	–	सौ (जीवित रहें)।
अदीनाः	–	न दीनाः, दैन्यात् रहिताः, दीनता से रहित।
भूयश्च शरदः शतात्	–	पुनः पुनः शतात् शरदः एवमेव भवेत्, बार-बार सौ वर्षों से भी अधिक यही स्थिति बनी रहे।
बिभ्रती	–	धारण करती हुई।
विवाचसम्	–	विभिन्न भाषा वाले।
यथौकसम्	–	धारण करने वाले घर के समान।
दुहाम्	–	दुहावे, बहा दे।
अनुपस्फुरन्ती	–	कम्पन रहित।

अभ्यासः

1. **संस्कृतभाषया उत्तरत**

(क) सङ्गच्छध्वम् इति मन्त्रः कस्मात् वेदात् संकलितः?

(ख) अस्माकम् आकूतिः कीदृशी स्यात्?

(ग) अत्र मन्त्रे 'यजमानाय' इति शब्दस्य स्थाने कः शब्दः प्रयुक्तः?

(घ) अस्मभ्यम् इति कस्य शब्दस्य अर्थः?

(ङ) ज्योतिषां ज्योतिः कः कथ्यते?
(च) माध्वीः काः सन्तु?
(छ) पृथिवीसूक्तं कस्मिन् वेदे विद्यते?

2. अधोलिखितक्रियापदैः सह कर्तृपदानि योजयत

(क) .... सञ्जानानाः उपासते।

(ख) .... मधु क्षरन्ति।

(ग) मे .... शिवसंकल्पम् अस्तु।

(घ) .... शतं शरदःशृणुयाम।

3. शुद्धं विलोमपदं योजयत

जाग्रतः	वः
नः	अदीनाः
दीनाः	सुप्तस्य

4. अधोलिखितपदानाम् आशयं हिन्दी-भाषया स्पष्टीकुरुत

उपासते, सिन्धवः, सवितः, जाग्रतः, पश्येम।

5. (क) वेदे प्रकल्पितस्य समाजस्य आदर्शस्वरूपम् पञ्चवाक्येषु चित्रयत।
(ख) मनसः किं वैशिष्ट्यम्?

6. पश्येम, शृणुयाम, प्रब्रवाम, इति क्रियापदानि केन इन्द्रियेण सम्बद्धानि

7. अधोलिखितवैदिकक्रियापदानां स्थाने लौकिकक्रियापदानि लिखत

असति, उच्चरत्, दुहाम्।

योग्यताविस्तारः

ऋग्वेदः मूलतः ज्ञानकाण्डं कथ्यते तत्र मुख्यतः देवतापरकमन्त्राः सन्ति-यथा अग्निः, इन्द्रः, रुद्रः, सविताप्रभृतयः। कतिपयानि सूक्तानि दार्शनिकानि सन्ति यथा नासदीयसूक्तम्, ज्ञानसूक्तम्, हिरण्यगर्भादिसूक्तम् कतिपयानि सामाजिकसूक्तानि अपि सन्ति येषु धनान्नदानसूक्तम् अक्षसूक्तम् संगठनसूक्तादयः। ऋग्वेदस्य साम्मनस्यसूक्तस्य पल्लवनम् उत्तरवर्तिषु उपनिषदादिशास्त्रेष्वपि उपलभ्यते। यथा- **सह नाववतु सह नौ भुनक्तु सह वीर्यं करवावहै। तेजस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहै॥ तैत्तिरीय उप०**

''सङ्गच्छध्वम्'' .... तथा **''समानी''** .... इत्यादिमन्त्राणां भावः गीतिरूपे हिन्द्याम् अपि प्राप्यते। यथा–

(1) प्रेम से मिलकर चलो बोलो सभी ज्ञानी बनो।
पूर्वजों की भाँति तुम कर्त्तव्य के मानी बनो।।

(2) हों विचार समान सबके चित्र मन सब एक हों।
ज्ञान देता हूँ बराबर भोग्य पा सब नेक हों।।

प्रकृतौ माधुर्यस्य प्रार्थना एवं पारिवारिकमधुरतायाः अर्चनस्य आधारः। अतः अथर्ववेदे एतादृश्यः प्रार्थनाः उपलभ्यन्ते।

अनुव्रतः पिता पुत्रो मात्रा भवतु सम्मनाः।
जाया पत्ये मधुमतीं वाचं वदतु शान्ति वाम्।। (*अथर्व 3.3.2*)
मधुमान्नो वनस्पतिर्मधुमाँ अस्तु सूर्यः
माध्वीर्गावो भवन्तु नः। (*ऋग्वेदः 1.10.08*)

यजुर्वेदः मुख्यतः कर्मकाण्डस्य वेदः अस्ति, परम् अस्मिन् अपि जीवनविषयकाः मन्त्राः उपलब्धाः सन्ति। मनसः निग्रहणार्थं यजुर्वेदे अनेके मन्त्राः सन्ति। यथा–

यत्प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च यज्योतिरन्तरमृतं प्रजासु।
यस्मान्न ऋते किञ्चन कर्म क्रियते तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु।।
(*यजु 34/3*)

यद्यपि ऋग्वेदस्यैव मन्त्राः सामवेदे सन्ति तथापि सामवेदमन्त्रेषु गेयता विद्यते।

अथर्ववेदः विज्ञानकाण्डं मन्यते। अस्मिन् वेदे विविधाः मन्त्राः सन्ति। यथा आयुर्वेदविषयकाः, भौतिकविज्ञानविषयकाः, अर्थशास्त्रविषयकाः व्यवहारशास्त्रविषयकाः तथा च परं राष्ट्रीयभावनायाः दृढीकरणं अस्य वेदस्य वैशिष्ट्यम् अस्ति। अथर्ववेदे पृथ्वी मातृवत् स्पृहणीया निगदिता।

यस्यां समुद्र उत सिन्धुरापो
यस्यामन्नं कृष्टयः संबभूवुः।
यस्यामिदं जिन्वति प्राणदेजत्
सा नो भूमिः पूर्वपेये दधातु।। (*अथर्ववेदः 12.1.3*)
ब्रह्मचर्येण राजा राष्ट्रं विरक्षति (*अथर्ववेदः*)

द्वितीयः पाठः

ऋतुचित्रणम्

प्रस्तुत पाठ आदिकवि महर्षि वाल्मीकिकृत **रामायण** के **किष्किन्धा, अरण्य** तथा **सुन्दर काण्डों** से संकलित है। रामायण संस्कृत साहित्य का आदि महाकाव्य माना जाता है। इस ग्रन्थ का सांस्कृतिक महत्त्व बहुत अधिक है। इसमें महर्षि वाल्मीकि ने जीवन के आदर्शभूत और शाश्वत मूल्यों का निर्देश किया है। इसमें राजा, प्रजा, पुत्र, माता, पत्नी, पति, सेवक आदि के पारस्परिक संबन्धों का एक आदर्श स्वरूप प्रस्तुत किया गया है। इस महाकाव्य में वाल्मीकि का प्रकृति-चित्रण अत्यन्त मनोरम एवं हृदयाकर्षक है।

इस पाठ में 1-3 श्लोकों में वसन्त ऋतु का, 4-6 श्लोकों में वर्षा ऋतु का, 7वें एवं 8वें श्लोक में शरद् ऋतु का, नवम में हेमन्त तथा दशम में शिशिर ऋतु का और एकादश में चन्द्रोदय का विशद एवं मनोहारी वर्णन किया गया है।

सुखानिलोऽयं सौमित्रे! कालः प्रचुरमन्मथः।
गन्धवान् सुरभिर्मासो जातपुष्पफलद्रुमः॥1॥

पुष्पभारसमृद्धानि शिखराणि समन्ततः।
लताभिः पुष्पिताग्राभिरुपगूढानि सर्वतः॥2॥

पतितैः पतमानैश्च पादपस्थैश्च मारुतः।
कुसुमैः पश्य सौमित्रे! क्रीडन्निव समन्ततः॥3॥

(*वा.रा.किष्किन्धा. 1.10, 9, 13*)

क्वचित्प्रकाशं क्वचिदप्रकाशं नभः प्रकीर्णाम्बुधरं विभाति।
क्वचित्क्वचित्पर्वतसन्निरुद्धं रूपं यथा शान्तमहार्णवस्य॥4॥

समुद्वहन्तः सलिलाऽतिभारं बलाकिनो वारिधरा नदन्तः।
महत्सु शृङ्गेषु महीधराणां विश्रम्य विश्रम्य पुनः प्रयान्ति॥5॥

वहन्ति वर्षन्ति नदन्ति भान्ति ध्यायन्ति नृत्यन्ति समाश्वसन्ति।
नद्यो घना मत्तगजा वनान्ताः प्रियाविहीनाः शिखिनः प्लवङ्गाः।।6।।

(*वा.रा.किष्किन्धा. 28.17, 22, 26*)

जलं प्रसन्नं कुसुमप्रहासं क्रौञ्चस्वनं शालिवनं विपक्वम्।
मृदुश्च वायुर्विमलश्च चन्द्रः शंसन्ति वर्षव्यपनीतकालम्।।7।।

लोकं सुवृष्ट्या परितोषयित्वा नदीस्तटाकानि च पूरयित्वा।
निष्पन्नशस्यां वसुधां च कृत्वा त्यक्त्वा नभस्तोयधराः प्रयाताः।।8।।

(*वा.रा.किष्किन्धा. 30, 53, 57*)

रविसङ्क्रान्तसौभाग्यस्तुषारारुणमण्डलः।
निःश्वासान्ध इवादर्शश्चन्द्रमा न प्रकाशते।।9।।

वाष्पसञ्छन्नसलिला रुतविज्ञेयसारसाः।
हिमार्द्रबालुकास्तीरैः सरितो भान्ति साम्प्रतम्॥10॥

(*वा.रा. अरण्य 16, 9, 13, 24*)

हंसो यथा राजतपञ्जरस्थः
सिंहो यथा मन्दरकन्दरस्थः।
वीरो यथा गर्वितकुञ्जरस्थ-
श्चन्द्रोऽपि बभ्राज तथाम्बरस्थः॥11॥

(*वा.रा.सुन्दर 5, 4*)

शब्दार्थाः टिप्पण्यश्च

रविसंक्रान्तसौभाग्यः – रविणा सूर्येण संक्रान्तं ध्वस्तं सौभाग्यं प्रकाशः यस्य सः, सूर्य के द्वारा जिसका प्रकाश मलिन कर दिया गया है।

तुषारारुणमण्डलः – तुषारेण हिमेन अरुणं अरुणवर्णं मण्डलं यस्य सः, तुषार के समान जिसका मण्डल अरुण वर्ण कर दिया गया है।

निःश्वासान्धः – श्वास से मलिन किया गया।

आदर्शः – दर्पण।

सुखानिलः – आनन्द देने वाली हवा।

मन्मथः – कामदेव।

गन्धवान् – सुगन्ध देने वाली (गन्ध् + मतुप् प्र., ए.व.)।

सुरभिर्मासः – वसन्त ऋतु।

समन्ततः – चारों ओर से।

पुष्पिताग्राभिरुपगूढानि – खिले हुए फूलों से भरी हुई।

पतितैः – गिरे हुए।

पतमानैः – गिरते हुए।

पादपस्थैः – पेड़ों पर स्थित।

प्रकीर्णाम्बुधरम् – आकाश जिसमें बादल फैले हैं।

विभाति – शोभा दे रहा है (वि + भा + लट् प्र.पु.ए.व.)।

पर्वतसन्निरुद्धम् – पर्वतों से घिरे हुए।

महार्णवस्य – समुद्र का।

समुद्वहन्तः – वहन करते हुए (सम् + उत् + वह् + शतृ प्र.ब.व.)।

बलाकिनः – बगुलों से युक्त।

नदन्तः	–	गरजते हुए (नद् + शतृ + प्र.ब.व.)।
समाश्वसन्ति	–	प्रसन्न होते हैं (सम् + आ + श्वस् + लट् + प्र.ब.व.)।
वनान्ताः	–	वन प्रदेश के एक भाग में।
शिखिनः	–	मोर।
प्लवङ्गाः	–	मेंढक।
कुसुमप्रहासम्	–	खिले हुए फूलों से युक्त।
क्रौञ्चस्वनम्	–	क्रौंच पक्षी की आवाज।
शालिवनम्	–	धान का खेत।
विपक्वम्	–	पका हुआ।
शंसन्ति	–	सुशोभित कर रहे हैं (शंस् + लट् प्र.पु.ब.व.)।
वर्षव्यपनीतकालम्	–	वर्षा ऋतु बीतने के बाद का समय अर्थात् शरद् ऋतु।
तटाकानि	–	तालाब।
निष्पन्नशस्याम्	–	खेती-बाड़ी का कार्य संपन्न हो गया जिसका, वह।

अभ्यासः

1. संस्कृतेन उत्तरं दीयताम्

(क) अयं पाठः कस्मात् ग्रन्थात् सङ्कलितः?
(ख) वसन्ते समन्ततः गिरिशिखराणि कीदृशानि भवन्ति?
(ग) मारुतः कीदृशैः कुसुमैः क्रीडन्निव अवलोक्यते?
(घ) प्रकीर्णाम्बुधरं नभः कथं विभाति?
(ङ) कस्यातिभारं समुद्वहन्तः वारिधराः प्रयान्ति?
(च) वर्षर्तौ मत्तगजाः किं कुर्वन्ति?
(छ) शरदृतौ चन्द्रः कीदृशो भवति?
(ज) कानि पूरयित्वा तोयधराः प्रयाताः?
(झ) अस्मिन् पाठे 'तोयधराः, इत्यस्य के के पर्यायाः प्रयुक्ताः?
(ञ) कीदृशः आदर्शः न प्रकाशते?
(ट) शिशिरर्तौ सरितः कैः भान्ति?

2. रिक्तस्थानानि पूरयत

(क) समन्ततः .... शिखराणि सन्ति।
(ख) नभः .... विभाति।
(ग) वारिधराः महीधराणां शृङ्गेषु .... प्रयान्ति।

(घ) तोयधराः .... प्रयाताः।

(ङ) निःश्वासान्ध आदर्श इव .... न प्रकाशते।

3. अधोलिखितानां सप्रसङ्गं व्याख्या कार्या

(क) मारुतः कुसुमैः पश्य सौमित्रे! क्रीडन्निव समन्ततः।

(ख) निःश्वासान्ध इवादर्शश्चन्द्रमा न प्रकाशते।।

4. प्रकृतिं प्रत्ययं च योजयित्वा पदरचनां कुरुत

कृ+क्त्वा (त्वा), क्रीड्+शतृ, गन्ध+मतुप्, सम्+नि+रुध्+क्त।

5. प्रकृतिप्रत्ययविभागः क्रियताम्

त्यक्त्वा, विश्रम्य, समुद्वहन्तः, पतमानः, हिमवान्।

6. अधोलिखितान् शब्दान् आश्रित्य वाक्यरचनां कुरुत

क्रीडन्, गन्धवान्, विश्रम्य, पूरयित्वा, नभः, नदन्तः, त्यक्त्वा, साम्प्रतम्, शिखिनः, प्रयाति।

7. सन्धिं/सन्धिविच्छेदं वा कुरुत

(क) सुख + अनिलः + अयम् = ...

(ख) प्रकीर्णाम्बुधरम् = ... + ...

(ग) क्रीडन् + इव = ...

(घ) चन्द्रोऽपि = ... + ...

(ङ) निःश्वास + अन्धः = ...

8. अधोलिखितानां कर्तृक्रियापदानां समुचितं मेलनं कुरुत

(क) प्लवङ्गाः	–	नदन्ति
(ख) वनान्ताः	–	समाश्वसन्ति
(ग) शिखिनः	–	भान्ति
(घ) नद्यः	–	ध्यायन्ति
(ङ) मत्तगजाः	–	वर्षन्ति
(च) प्रियाविहीनाः	–	नृत्यन्ति
(छ) घनाः	–	वहन्ति

9. अधोलिखितयोः श्लोकयोः अन्वयं प्रदर्शयत

(क) समुद्वहन्तः सलिलातिभारं .... प्रयान्ति।

(ख) हंसो यथा .... तथाम्बरस्थः।

10. अधोलिखितेषु श्लोकेषु प्रयुक्तालङ्काराणां निर्देशं कुरुत

(क) पतितैः पतमानैश्च .... क्रीडन्निव समन्ततः।

(ख) वहन्ति वर्षन्ति .... प्लवङ्गाः।

(ग) रविसङ्क्रान्तसौभाग्यः .... चन्द्रमा न प्रकाशते।

11. अधोलिखितश्लोकेषु छन्दो निर्देशः कार्यः

(क) क्वचित्प्रकाशम् .... शान्तमहार्णवस्य।

(ख) हंसो यथा .... तथाम्बरस्थः।

(ग) रविसङ्क्रान्तसौभाग्यः .... न प्रकाशते।

योग्यताविस्तारः

(क) भावविस्तारः

महाकविना कालिदासेन ऋतुसंहारमिति काव्ये षण्णाम् ऋतूनां क्रमेण वर्णनं विहितम्। यथा –

ग्रीष्मः

प्रचण्डसूर्यः स्पृहणीयचन्द्रमाः सदावगाहक्षतवारिसञ्चयः।
दिनान्तरम्योऽभ्युपशान्तमन्मथो निदाघकालोऽयमुपागतः प्रिये॥

वर्षा

ससीकराम्भोधरमत्तकुञ्जरस्तडित्पताकोऽशनिशब्दमर्दलः।
समागतो राजवदुद्धतद्युतिर्घनागमः कामिजनप्रियः प्रिये॥

शरत्

काशांशुका विकचपद्ममनोज्ञवक्त्रा
सोन्मादहंसरवनूपुरनादरम्या।
आपक्वशालिरुचिरानतगात्रयष्टिः
प्राप्ता शरन्नववधूरिव रूपरम्या।

हेमन्तः

नवप्रवालोद्गमसस्यरम्यः प्रफुल्ललोध्रः परिपक्वशालिः।
विलीनपद्मः प्रपतत्तुषारो हेमन्तकालः समुपागतोऽयम्॥

शिशिरः

न चन्दनं चन्द्रमरीचिशीतलम्
न हर्म्यपृष्ठं शरदिन्दुनिर्मलम्।
न वायवः सान्द्रतुषारशीतला
जनस्य चित्तं रमयन्ति साम्प्रतम्॥

वसन्तः

द्रुमाः सपुष्पाः सलिलं सपद्मं
स्त्रियः सकामाः पवनः सुगन्धिः।
सुखाः प्रदोषा दिवसाश्च रम्याः
सर्वं प्रिये चारुतरं वसन्ते॥

(ख) भाषिकविस्तारः

अधोलिखितानां शब्दानां रूपाणि साधनीयानि

शिखी – शिखिन् + प्रथमा एकवचन (शिखिनौ, शिखिनः)
करी – करिन् + प्रथमा एकवचन
गुणी – गुणिन् + प्रथमा एकवचन
बली – बलिन् + प्रथमा एकवचन

तृतीयः पाठः

परोपकाराय सतां विभूतयः

संस्कृत साहित्य में जातक कथाओं का अपना विशेष महत्त्व है। ये कथाएँ मूलतः पालि में हैं जिनकी संख्या 547 है। बोधिसत्त्व के कर्म दिव्य और अद्भुत हैं। उनका जीवन अलौकिक और आदर्श है। इसी से प्रेरणा लेकर आर्यशूर ने **जातकमाला** ग्रन्थ की रचना की। यह ग्रन्थ गद्य-पद्य मिश्रित संस्कृत में है। प्रस्तुत पाठ इसी ग्रन्थ के पन्द्रहवें जातक **'मत्स्यजातकम्'** का संक्षेप है।

इसमें बताया गया है कि सत्य-तपोबल के आधार पर किस प्रकार मत्स्याधिपति के रूप में बोधिसत्त्व अपने साथी मत्स्यों की प्राण रक्षा करने में समर्थ होते हैं। वस्तुतः सत्त्वगुण से परिपूर्ण आचरण देवताओं को भी वश में कर सकता है।

बोधिसत्त्वः किल कस्मिंश्चित् नातिमहति कमलकुवलयादि-विभूषितसलिले हंसचक्रवाकादिशोभिते तीरान्ततरुकुसुमावकीर्णे सरसि मत्स्याधिपतिः बभूव। बहुषु जन्मान्तरेषु परोपकाराभ्यासवशात् तत्रस्थः अपि परहितसुखसाधने व्यापृतः अभवत्। इष्टानामिव च स्वेषाम् अपत्यानाम् उपरि सौहार्दत्वाद् महासत्त्वः तेषां मीनानां दानप्रिय-वचनादिक्रमैः परमनुग्रहं चकार।

अथ कदाचित् सत्त्वानां भाग्यवैकल्यात् प्रमादाच्च सम्यग् देवो न ववर्ष। वृष्टेः अभावे तत् सरः कदम्बकुसुमगौरेण नवसलिलेन यथापूर्वं न परिपूर्णम् जातम्। क्रमेण च उपगते निदाघकाले दिनकरकिरणैः अभितप्तया धरण्या, ज्वालानुगतेनेव मारुतेन पिपासावशादिव प्रत्यहम् आपीयमानं तत् सरः लघुपल्वलमिवाभवत्। तत्रस्थिताः मीनाश्च जलाभावात् मृतप्रायाः इव संजाताः। सलिलतीरवासिनः पक्षिणः वायसगणाः च यावत् तान् मत्स्यान् भक्षयितुं

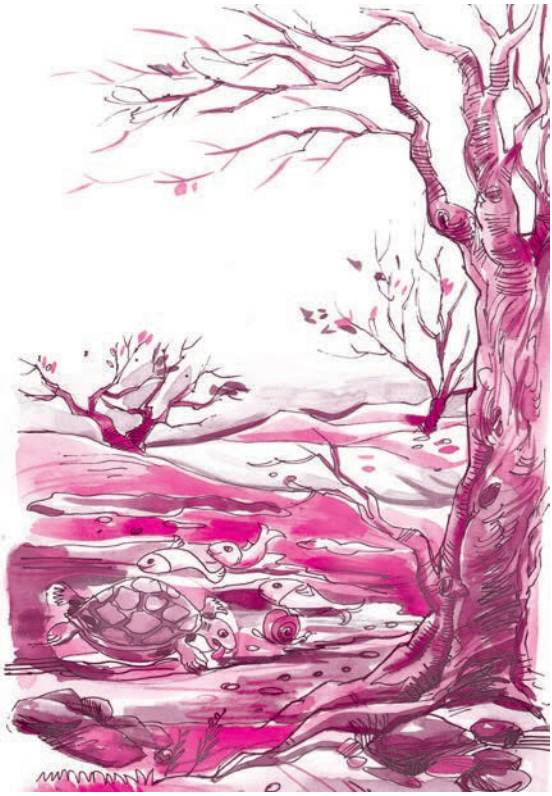

चिन्तयन्ति स्म तावद् विषाददैन्यवशगं मीनकुलमवेक्ष्य बोधिसत्त्वः करुणायमानः चिन्तामापेदे। कष्टा बत इयम् आपद् आपतिता मीनानाम्।

प्रत्यहं क्षीयते तोयं स्पर्धमानमिवायुषा।
अद्यापि च चिरेणैव लक्ष्यते जलदागमः॥
अपयानक्रमो नास्ति नेताप्यन्यत्र को भवेत्।
अस्मद्व्यसनसङ्कृष्टाः समायान्ति च नो द्विषः॥

तत्किमत्र प्राप्तकालं स्यादिति विमृशन् स महात्मा स्वकीय-सत्यतपोबलमेव तेषां रक्षणोपायम् अमन्यत। करुणया समापीड्यमानहृदयो दीर्घं निःश्वस्य नभः समुल्लोकयन् उवाच –

स्मरामि न प्राणिवधं यथाहं सञ्चिन्त्य कृच्छ्रे परमेऽपि कर्तुम्।
अनेन सत्येन सरांसि तोयैरापूरयन् वर्षतु देवराजः॥

अथ तस्य महात्मनः पुण्योपचयात् सत्याधिष्ठानबलात् च समन्ततः तोयपरिपूर्णाः गम्भीरमधुरनिर्घोषा अकाला अपि कालमेघाः विद्युल्लताऽलङ्कृताः प्रादुरभवन्। बोधिसत्त्वः समन्ततोऽभिप्रसृतैः सलिलप्रवाहैरापूर्यमाणे सरसि, धारानिपातसमकालेन विद्रुतवायसाद्ये पक्षिगणे, लब्धजीविताशे च प्रमुदिते मीनगणे प्रीत्याभिसार्यमाणहृदयो वर्षानिवृत्तिसाशङ्कः पुनः पुनः पर्जन्यमाबभाषे –

उद्गर्ज पर्जन्य गभीरधीरं प्रमोदमुद्वासय वायसानाम्।
रत्नायमानानि पयांसि वर्षन् संसक्तविद्युज्ज्वलितद्युतीनि॥

तदुपश्रुत्य देवानाम् इन्द्रः शक्रः परमविस्मितमनाः साक्षात् अभिगम्यैनम् अभिसंराधयन् उवाच–

तवैव खल्वेष महानुभाव ! मत्स्येन्द्र ! सत्यातिशयप्रभावः।
आवर्जिता यत्कलशा इवेमे क्षरन्ति रम्यस्तनिताः पयोदाः॥

इत्येवं प्रियवचनैः संराध्य तत्रैवान्तर्दधे। तच्च सरः तोयसमृद्धिमवाप। तदेवं शीलवताम् इह एव कल्याणाः अभिप्रायाः वृद्धिम् आप्नुवन्ति प्रागेव परत्र च। अतः शीलविशुद्धौ प्रयतितव्यम्।

शब्दार्थाः टिप्पणयश्च

कुवलयम्	–	नीलकमलम्, नीला कमल।
चक्रवाकादिशोभिते	–	चक्रवाक (चकवा) आदि पक्षी गणों से सुशोभित।
तत्रस्थः अपि	–	वहाँ, उस जन्म में स्थित होते हुए भी।
भाग्यवैकल्यात्	–	भाग्यस्य वैकल्यम् तस्मात्, भाग्य के अनुकूल न होने पर।
आपीयमानम्	–	आ समन्तात् पीयमानम् पा कर्मवाच्य, शानच्, चारों ओर से पीया जाता हुआ।
लघुपल्वलमिव	–	छोटे तालाब के समान।
विषाददैन्यवशगम्	–	विषादः च दैन्यं च विषाददैन्ये, तयोः वशं गतम्, विषाद और दैन्य के वशीभूत।
अवेक्ष्य	–	अव + ईक्ष् + क्त्वा >ल्यप्, देखकर।
आपेदे	–	प्राप्त हुआ।
बत	–	शोक को व्यक्त करने वाला अव्यय पद, हाय!
स्पर्धमानम्	–	स्पर्धां कुर्वाणम् (स्पर्ध् + शानच्), स्पर्धा करता हुआ।
जलदागमः	–	जलं ददाति इति जलदः तेषाम् आगमः, बादलों का आगमन।
चिरेण	–	दूर ही (देर से)
अपयानक्रमः	–	अपयानस्य क्रमः दूरगमनस्य मार्गः, बाहर जाने का रास्ता।
द्विषः	–	शत्रवः, शत्रुगण।
प्राप्तकालम्	–	प्राप्तः कालः यस्य तत्, समयोचित।
विमृशन्	–	वि मृश्, शतृ पुं, प्र. ए.व., विचार करते हुए।
नभः	–	आकाशम्, आकाश को।
आपूरयन्	–	आ पृ-णिच्, शतृ, पु. प्र. ए.व., पूरते हुए, भरते हुए।
सत्याधिष्ठानबलात्	–	सत्य पर दृढ़ रहने की शक्ति से।
अकालाः	–	न कालः येषाम् ते, असमय प्रकट होने वाले।
कालमेघाः	–	प्रलय काल के समान मेघ।
विद्रुते	–	वि द्रु क्त सप्तमी, ए.व., भाग जाने पर।
अभिसार्यमाणहृदयः	–	अभिसार्यमाणं प्रसाद्यमानं हृदयं यस्य सः, प्रसन्न किये जाते हुए हृदय वाला।

वर्षानिवृत्तिसाशङ्कः	–	वर्षाणां निवृत्तिम् अधिकृत्य आशङ्कया सह विद्यमानः, वर्षा की समाप्ति की आशंका वाला।
पर्जन्यम्	–	मेघम्, बादल को।
संसक्तविद्युज्ज्वलितद्युतीनि	–	संसक्तायाः विद्युतः ज्वलितेन द्युतिः येषां तानि, लगातार चमकती हुई बिजली के प्रकाश से युक्त।
रत्नायमानानि पयांसि	–	रत्नों के समान दिखाई पड़ने वाले जल।
उद्वासय	–	उद् वस् णिच् लोट् मध्यम पु., ए.व., समाप्त कीजिए।
उपश्रुत्य	–	उप श्रु + क्त्वा >ल्यप्, सुनकर।
अभिसंराधयन्	–	अभि सम् राध् शतृ पुं., ए.व., स्तुति करते हुए।
सत्यातिशयप्रभावः	–	सत्यस्य अतिशयः तस्य प्रभावः, सत्य का अलौकिक प्रभाव।
आवर्जिताः कलशा इव	–	पलटाये गये घड़ों के समान।
अन्तर्दधे	–	अन्तः धा, लिट्, प्र. पु., ए.व., अन्तर्धान हो गया।
अभिप्रायाः	–	मनोरथ।
इह	–	अस्मिन् लोके, इस लोक में।
परत्र	–	परलोके, परलोक में।

अभ्यासः

1. **संस्कृतभाषया उत्तरत**

(क) जातकमालायाः लेखकः कः?
(ख) कथायां वर्णिते जन्मनि बोधिसत्त्वः कः बभूव?
(ग) महासत्त्वः मीनानां कैः परमनुग्रहम् अकरोत्?
(घ) सरः लघुपल्वलमिव कथमभवत्?
(ङ) बोधिसत्त्वः किमर्थं चिन्तामकरोत्?
(च) तोयं प्रतिदिनं केन स्पर्धमानं क्षीयते स्म?
(छ) आकाशे अकाला अपि के प्रादुरभवन्?
(ज) कया आशङ्कया बोधिसत्त्वः पुनः पुनः पर्जन्यं प्रार्थितवान्?
(झ) शक्रः केषां राजा आसीत्?
(ञ) अस्माभिः कुत्र प्रयतितव्यम्?

2. रिक्तस्थानानि पूरयत

(क) बोधिसत्त्वः परहितसुखसाधने .... अभवत्।

(ख) तत्रस्थिताः मीनाः जलाभावात् .... इव संजाताः।

(ग) विषाददैन्यवशगं मीनकुलमवेक्ष्य बोधिसत्त्वः .... आपेदे।

(घ) स महात्मा स्वकीयसत्यतपोबलमेव तेषां .... अमन्यत।

(ङ) तत् .... तोयसमृद्धिमवाप।

3. सप्रसङ्गं व्याख्या कार्या

(क) बहुषु जन्मान्तरेषु परोपकार-अभ्यासवशात् तत्रस्थः अपि परहितसुखसाधने व्यापृतः अभवत्।

(ख) अस्मद्व्यसनसङ्कृष्टाः समायान्ति नो द्विषः।

(ग) शीलवताम् इह एव कल्याणाः अभिप्रायाः वृद्धिम् आप्नुवन्ति।

4. अधोलिखितशब्दान् ल्यबन्तेषु शतृप्रत्ययान्तेषु शानच्प्रत्ययान्तेषु च विभज्य लिखत

आपीयमानम्, अवेक्ष्य, स्पर्धमानम्, समापीड्यमानम्, निःश्वस्य, रत्नायमानानि, अभिगम्य, संराधयन्, विमृशन्, समुल्लोकयन्।

5. विशेषणानि विशेष्यैः सह योजयत

(क) सरसि	इष्टानाम्
(ख) धरण्या	कदम्बकुसुमगौरेण
(ग) अपत्यानाम्	हंसचक्रवाकादिशोभिते
(घ) नवसलिलेन	अभितप्तया
(ङ) पक्षिणः	ज्वालानुगतेन
(च) बोधिसत्त्वः	तत्रस्थाः
(छ) मीनः	सलिलतीरवासिनः
(ज) मारुतेन	करुणायमानः

6. अधोलिखितपदानि संस्कृतवाक्येषु प्रयुङ्ध्वम्

कस्मिंश्चित्, भाग्यवैकल्यात्, आपीयमानम्, लक्ष्यते, विमृशन्, अभिगम्य, प्रयतितव्यम्।

7. पर्यायवाचकं चिनुत

मीनः, पक्षी, प्रत्यहम्, आपद्, पर्जन्यः।

8. अधोलिखितवाक्येषु उपमानानि योजयत

(क) .... इव मीनानां परमनुग्रहं चकार।

(ख) .... इव तोयं प्रत्यहं क्षीयते।

(ग) .... इव इमे पयोदाः क्षरन्ति।

(घ) .... इव नवसलिलेन सरः परिपूर्णं न जातम्।

(ङ) सरः ग्रीष्मकाले .... इव सञ्जातम्।

योग्यताविस्तारः

अधोलिखितानां सूक्तीनाम् अध्ययनं कृत्वा प्रस्तुतपाठेन भावसाम्यम् अवधत्त

(1) पिबन्ति नद्यः स्वयमेव नाम्भः
स्वयं न खादन्ति फलन्ति वृक्षाः।
धाराधरो वर्षति नात्महेतोः
परोपकाराय सतां विभूतयः।

(2) अष्टादशपुराणेषु व्यासस्य वचनद्वयम्।
परोपकारः पुण्याय पापाय परपीडनम्॥

(3) श्रूयतां धर्मसर्वस्वं श्रुत्वा चैवावधार्यताम्।
आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्॥

(4) छायामन्यस्य कुर्वन्ति तिष्ठन्ति स्वयमातपे।
फलान्यपि परार्थाय वृक्षाः सत्पुरुषा इव॥

(5) ऊर्ध्वबाहुर्विरौम्येष न च कश्चिच्छृणोति मे।
परोपकारः पुण्याय पापाय परपीडनम्॥

(6) भवन्ति नम्रास्तरवः फलोद्गमैः
नवाम्बुभिर्दूरविलम्बिनो घनाः।
अनुद्धताः सत्पुरुषाः समृद्धिभिः
स्वभाव एवैष परोपकारिणाम्॥

(7) प्रदानं प्रच्छन्नं गृहमुपगते सम्भ्रमविधिः,
प्रियं कृत्वा मौनं सदसि कथनं चाप्युपकृतेः।
अनुत्सेको लक्ष्म्यामनभिभवगन्धाः परकथाः
सतां केनोद्दिष्टं विषममसिधाराव्रतमिदम्॥

चतुर्थः पाठः

मानो हि महतां धनम्

प्रस्तुत पाठ महर्षि वेदव्यास रचित **महाभारत** के उद्योग पर्व के 131, 134 अध्यायों से संकलित है। इसमें क्षात्र धर्म के कर्त्तव्यों का उपदेश देती हुई कुन्ती के पुरातन इतिहास का उल्लेख करते हुए विदुरा द्वारा सिन्धुराज से युद्ध में परास्त अपने पुत्र को, कायरता का त्याग कर, अपने स्वाभिमान को पुनः प्राप्त करने का उपदेश दिया गया है।

इस पाठ के श्लोकों में मानव के कुल के उत्थान, आत्मबल, परोपकार की महिमा एवं उसके उत्कृष्ट स्वरूप का वर्णन है।

कुन्ती उवाच –

क्षात्रधर्मरता धन्या विदुरा दीर्घदर्शिनी।
विश्रुता राजसंसत्सु श्रुतवाक्या बहुश्रुता॥1॥

विदुरा नाम वै सत्या जगर्हे पुत्रमौरसम्।
निर्जितं सिन्धुराजेन शयानं दीनचेतसम्।
अनन्दनमधर्मज्ञं द्विषतां हर्षवर्धनम्॥2॥

उत्तिष्ठ हे कापुरुष
मा शेष्वैवं पराजितः।
अमित्रान्नन्दयन्सर्वा-
न्निर्मानो बन्धुशोकदः॥3॥

उद्भावयस्व वीर्यं वा
तां वा गच्छ ध्रुवां गतिम्।
धर्मं पुत्राग्रतः कृत्वा
किं निमित्तं हि जीवसि॥4॥

कुरु सत्त्वं मानं च विद्धि पौरुषमात्मनः।
उद्भावय कुलं मग्नं त्वत्कृते स्वयमेव हि॥5॥

यस्य वृत्तं न जल्पन्ति मानवा महदद्भुतम्।
राशिवर्धनमात्रं स नैव स्त्री न पुनः पुमान्॥6॥

य आत्मनः प्रियसुखे हित्वा मृगयते श्रियम्।
अमात्यानामथो हर्षमादधात्यचिरेण सः॥7॥

पुत्रः उवाच–

किं नु ते मामपश्यन्त्याः पृथिव्या अपि सर्वथा।
किमाभरणकृत्यं ते किं भोगैर्जीवितेन वा॥8॥

माता उवाच -

यमाजीवन्ति पुरुषं सर्वभूतानि संजय।
पक्वं द्रुममिवासाद्य तस्य जीवितमर्थवत्॥9॥

स्वबाहुबलमाश्रित्य योऽभ्युज्जीवति मानवः।
स लोके लभते कीर्त्तिं परत्र च शुभां गतिम्॥10॥

कुन्ती उवाच -

सदश्व इव स क्षिप्तः प्रणुन्नो वाक्यसायकैः।
तच्चकार तथा सर्वं यथावदनुशासनम्॥11॥

(उद्योग पर्व, 131, 134 अध्याय)

शब्दार्थाः टिप्पण्यश्च

क्षात्रधर्मरता	–	क्षात्रस्य धर्मः, क्षात्रधर्मः तस्मिन् रता, तत्पुरुष समास, क्षात्र धर्म का पालन करने वाली।
दीर्घदर्शिनी	–	दीर्घं द्रष्टुम् शीलं यस्याः सा, उपपद तत्पुरुष, भविष्य का चिन्तन करने वाली।
विश्रुता	–	प्रसिद्ध।
राजसंसत्सु	–	राज्ञः संसत्सु, सप्तमी तत्पुरुष राज्य सभाओं में।
श्रुतवाक्या	–	श्रुतानि वाक्यानि यया सा, न्याय पारंगत निपुण।
बहुश्रुता	–	बहु श्रुतं यया सा, विदुषी।

सत्या – सत्य भाषण करने वाली।

जगर्हे – गर्ह्, लिट् लकार प्र.पु. ए.व., निन्दा की।

औरसम् – उरसः जातम्, सगे बेटे को।

निर्जितम् – परास्त, हारे हुए।

शयानम् – शीङ् शानच्, द्वि., ए.व., सोते हुए, लेटे हुए।

दीनचेतसम् – दीनं चेतः यस्य सः तम् बहुव्रीहि, उदास हृदय वाले।

अनन्दनम् – न नन्दनम्, दूसरों को अप्रसन्न करने वाले।

अधर्मज्ञम् – धर्मं जानाति धर्मज्ञः न धर्मज्ञः अधर्मज्ञः तम्, धर्म को न जानने वाले को।

द्विषताम् – द्विष् + शतृ षष्ठी. ब.व., शत्रुओं के।

हर्षवर्धनम् – हर्षं वर्धयति तम्, प्रसन्न करने वाले।

शेष्व – शीङ् + लोट् लकार, म.पु. ए.व., सोओ।

अमित्रान् – शत्रुओं को।

नन्दयन् – नन्द् + णिच् + शतृ, प्र.पु. ए.व., प्रसन्न करते हुए।

निर्मानः – निर्गतो मानो यस्य सः, सम्मान रहित।

उद्भावयस्व – उद् + भू + णिच्(प्रेरणार्थक) लोट्लकार म.पु. ए.व., जानो, ज्ञात करो, प्रकट करो।

विद्धि – विद् + लोट् लकार, म.पु. ए.व.।

मग्नम् – मस्ज् + क्त, द्वि. ए.व., डूबे हुए (अवनत हुए कुल) को।

राशिवर्धनमात्रम् – मात्र संख्या बढ़ाने वाले।

शौर्यम् – शूर + ष्यञ्, शौर्यम् तस्मिन्, वीरता में।

हित्वा – हा + क्त्वा, छोड़कर।

मृगयते – खोजता है।

आदधाति + अचिरेण – उत्पन्न करता है, धारण करता है, शीघ्र।

अपश्यन्त्याः – न पश्यन्त्या, दृश + शतृ, स्त्री. षष्ठी ए.व., न देखते हुए।

आभरणकृत्यम् – आलंकारिक कार्य।

आजीवन्ति – आश्रय लेते हैं, सहारा लेते हैं।

पक्वम् – पच् + क्त, पका हुआ।

आसाद्य	–	आ + सद् + णिच् + क्त्वा >ल्यप्, पाकर।
अर्थवत्	–	अर्थ + मतुप्, सफल।
अभ्युज्जीवति	–	जीवित रहता है।
परत्र	–	परलोक में।
सदश्वः	–	अच्छा घोड़ा।
प्रणुन्नः	–	प्र + नुद् + क्त,पु., प्र., ए.व., प्रेरित किया हुआ।
वाक्यसायकैः	–	वाणी के बाणों से।
तच्चकार	–	तत् + चकार, वह (सब) किया।

अभ्यासः

1. **अधोलिखितानां प्रश्नानाम् उत्तरं संस्कृतेन देयम्**

(क) मानो हि महतां धनम् इत्ययं पाठः कस्माद् ग्रन्थात् संकलितः?

(ख) विदुरा कुत्र विश्रुता आसीत्?

(ग) विदुरायाः पुत्रः केन पराजितः अभवत्?

(घ) कः स्त्री पुमान् वा न भवति?

(ङ) कः अमात्यानां हर्षं न आदधाति?

(च) अपुत्रया मात्रा किम् आभरणकृत्यं न भवति?

(छ) कस्य जीवितम् अर्थवत् भवति?

2. **'य आत्मनः ..... अचिरेण सः' अस्य श्लोकस्य आशयं हिन्दी भाषया स्पष्टीकुरुत**

3. **रिक्तस्थानानाम् पूर्तिः विधेया**

(क) विदुरा औरसम् पुत्रं ....।

(ख) हे कापुरुष .... मा शेष्व।

(ग) त्वत्कृते स्वयमेव मग्नं .... उद्भावय।

(घ) यः प्रियसुखे .... श्रियम् मृगयते।

(ङ) मामपश्यन्त्याः .... अपि सर्वथा किम्?

(च) सर्वभूतानि .... यमाजीवन्ति।

(छ) स यथावत् .... चकार।

4. अधोलिखितानां शब्दानां विलोमान् लिखत

विश्रुता, सत्या, अधर्मज्ञम्, अमित्रान्, कापुरुषः, अचिरेण, आसाद्य।

5. पञ्चभिः वाक्यैः विदुरायाः चरित्रम् वर्णयत

6. 'यमाजीवन्ति .... जीवितमर्थवत्' अस्य श्लोकस्य अन्वयं लिखत

7. अधोलिखितपदानां संस्कृतवाक्येषु प्रयोगं कुरुत

विश्रुता, शयानम्, द्विषताम्, गतिम्, पक्वम्, क्षिप्तः।

योग्यताविस्तारः

अधोलिखितानां नारीचरित्राणां चरितमनुसन्धाय विदुरायाश्चरित्रेण तेषां तुलनां कुरुत-गार्गी, शकुन्तला, सावित्री।

पञ्चमः पाठः

सौवर्णशकटिका

महाकवि शूद्रक–प्रणीत **मृच्छकटिक** प्रकरण तत्कालीन समाज का दर्पण माना जाता है। अपने दानशील स्वभाव के कारण धनहीन ब्राह्मण सार्थवाह आर्य चारुदत्त तथा उज्जयिनी नगर की गणिका वसन्तसेना की प्रणयकथा पर आधारित यह नाट्यकृति उस युग की अराजकता, समाज में व्याप्त कुरीति, द्यूतव्यसन, चौर्यवृत्ति, न्यायालय में व्याप्त पक्षपात तथा राजा के सगे–संबन्धियों के स्वैराचार का प्रामाणिक वृत्त प्रस्तुत करती है।

प्रस्तुत नाट्यांश **मृच्छकटिक** के छठे अंक से लिया गया है। इसमें शिशु मन को उद्वेलित करने वाली बालसुलभ इच्छा को मार्मिक ढंग से व्यक्त किया गया है। धनी मानी पड़ोसी बच्चे की सोने की गाड़ी देख, धनहीन चारुदत्त का बेटा रोहसेन अशांत हो उठता है। दासी रदनिका उसे फुसलाने का प्रयत्न करती है – मिट्टी की गाड़ी देकर। परन्तु भोला शिशु अपनी जिद पर अड़ा रहता है। रदनिका उसे वसन्तसेना के पास ले जाती है। बच्चे का परिचय तथा उसके रोने का कारण जानकर वात्सल्यमयी वसन्तसेना अपने सारे आभूषण बच्चे को सौंप देती है और कहती है – इनसे तुम भी सोने की गाड़ी बनवा लेना।

इस प्रकार, प्रस्तुत नाट्यांश शिशुओं के निर्मल अन्तःकरण तथा स्नेहशीला नारी की वत्सलता को प्रकाशित करता है।

(*ततः प्रविशति दारकं गृहीत्वा रदनिका*)

रदनिका – **एहि वत्स! शकटिकया क्रीडावः।**

दारकः – (*सकरुणम्*)

रदनिके! किम्मम एतया मृत्तिकाशकटिकया? तामेव सौवर्णशकटिकां देहि।

रदनिका	-	(*सनिर्वेदं निःश्वस्य*)
		जात! कुतोऽस्माकं सुवर्णव्यवहारः? तातस्य पुनरपि ऋद्ध्या सुवर्णशकटिकया क्रीडिष्यसि। (*स्वगतम्*) **तद्यावद् विनोदयाम्येनम्। आर्याया वसन्तसेनायाः समीपमुपसर्पिष्यामि।** (*उपसृत्य*) **आर्ये! प्रणमामि।**
वसन्तसेना	-	**रदनिके! स्वागतं ते। कस्य पुनरयं दारकः? अनलङ्कृत-शरीरोऽपि चन्द्रमुख आनन्दयति मम हृदयम्।**
रदनिका	-	**एष खलु आर्यचारुदत्तस्य पुत्रो रोहसेनो नाम।**
वसन्तसेना	-	(*बाहू प्रसार्य*)
		एहि मे पुत्रक! आलिङ्ग।
		(*इत्यङ्के उपवेश्य*)
		अनुकृतमनेन पितुः रूपम्।
रदनिका	-	**न केवलं रूपं, शीलमपि तर्कयामि। एतेन आर्यचारुदत्त आत्मानं विनोदयति।**
वसन्तसेना	-	**अथ किन्निमित्तमेष रोदिति?**
रदनिका	-	**एतेन प्रातिवेशिकगृहपतिदारकस्य सुवर्णशकटिकया क्रीडितम्। तेन च सा नीता। ततः पुनस्तां मार्गयतो मयेयं मृत्तिकाशकटिका कृत्वा दत्ता। ततो भणति रदनिके! किम्मम एतया मृत्तिकाशकटिकया? तामेव सौवर्णशकटिकां देहि इति।**
वसन्तसेना	-	**हा धिक् हा धिक्! अयमपि नाम परसम्पत्त्या सन्तप्यते? भगवन् कृतान्त। पुष्करपत्रपतित-जलबिन्दुसदृशैः क्रीडसि त्वं पुरुषभागधेयैः।** (*इति सास्रा*)**। जात! मा रुदिहि! सौवर्णशकटिकया क्रीडिष्यसि।**
दारकः	-	**रदनिके! का एषा?**
रदनिका	-	**जात! आर्या ते जननी भवति।**
दारकः	-	**रदनिके! अलीकं त्वं भणसि। यद्यस्माकमार्या जननी तत् केन अलङ्कृता?**
वसन्तसेना	-	**जात! मुग्धेन मुखेन अतिकरुणं मन्त्रयसि।**

		(नाट्येन आभरणान्यवतार्य रोदिति)
		एषा इदानीं ते जननी संवृत्ता। तद् गृहाणैतमलङ्-कारकम्,
		सौवर्णशकटिकां घटय।
दारकः	–	**अपेहि, न ग्रहीष्यामि। रोदिषि त्वम्।**
वसन्तसेना	–	*(अश्रूणि प्रमृज्य)*
		जात! न रोदिष्यामि। गच्छ, क्रीड।
		(अलङ्कारैर्मृच्छकटिकां पूरयित्वा)
		जात! कारय सौवर्णशकटिकाम्।
		(इति दारकमादाय निष्क्रान्ता रदनिका)

शब्दार्थाः टिप्पण्यश्च

दारकम्	–	बालकम्, पुत्रकम्, बच्चे को।
शकटिकया	–	वाहनविशेषेण, गाड़ी के द्वारा।
मृत्तिकाशकटिकया	–	मृत्तिकानिर्मितया गन्त्र्या, मिट्टी की गाड़ी से।
सौवर्णशकटिकाम्	–	सुवर्णनिर्मितां गन्त्रीम्, सोने की गाड़ी को।
सुवर्णव्यवहारः	–	स्वर्णस्य आदानं प्रदानम्, सोने की लेन-देन।
विनोदयामि	–	अनुरञ्जयामि, बहलाती हूँ।
उपसर्पिष्यामि	–	पार्श्वमुपगमिष्यामि, पास पहुँचती हूँ।
किन्निमित्तम्	–	किमर्थम्, किस लिये, किस बात के लिये।
प्रातिवेशिकः	–	प्रतिवेशे निकटे स्थितः, पड़ोस में रहने वाला।
मार्गयतः	–	अन्विष्यतः, खोजने वाले का।
परसम्पत्त्या	–	अन्यस्य समृद्ध्या, पराई समृद्धि से।
सन्तप्यते	–	दुःखमनुभवति, सन्तप्त हो रहा है।
पुष्करपत्रम्	–	कमलपत्रम्, कमल का पत्ता।
पुरुषभागधेयैः	–	मनुष्यस्य भाग्यैः, मनुष्य के भाग्य के साथ।
अलीकम्	–	असत्यम्, झूठ।
अलङ्कृता	–	विभूषिता, आभूषण पहने हुई।
मुग्धेन मुखेन	–	कोमलेन (निर्दोषेण) मुखेन, भोले मुख से।

आभरणानि	–	आभूषणानि, गहनों को।
घटय	–	निर्मापय, बनवा लो।
अपेहि	–	दूरीभव, दूर हटो।
प्रमृज्य	–	सारयित्वा, पोंछ कर।
निष्क्रान्ता	–	बहिर्गता, बाहर निकल गई।

अभ्यासः

1. संस्कृतेन उत्तरं दीयताम्

(क) मृच्छकटिकम् इति नाटकस्य रचयिता कः?
(ख) दारकः (रोहसेनः) रदनिकां किमयाचत?
(ग) वसन्तसेना दारकस्य विषये किं पृच्छति?
(घ) रदनिका किमुक्त्वा दारकं तोषितवती?
(ङ) रोहसेनः कस्य पुत्रः आसीत्?
(च) आर्यचारुदत्तः केन आत्मानं विनोदयति?
(छ) रोहसेनः कीदृशीं शकटिकां याचते?
(ज) वसन्तसेना कैः मृच्छकटिकां पूरयति?
(झ) रोहसेनेन स्वपितुः किम् अनुकृतम्?
(ञ) वसन्तसेना किमुक्त्वा दारकं सान्त्वयामास?

2. हिन्दीभाषया व्याख्यां लिखत

(क) अनलङ्कृतशरीरोऽपि चन्द्रमुख आनन्दयति मम हृदयम्।
(ख) न केवलं रूपं शीलमपि तर्कयामि।
(ग) पुष्करपत्रपतितजलबिन्दुसदृशैः क्रीडसि त्वं पुरुषभागधेयैः।
(घ) जात! मुग्धेन मुखेन अतिकरुणं मन्त्रयसि।

3. अधोलिखितानां पदानां स्वसंस्कृतवाक्येषु प्रयोगं कुरुत

मृत्तिकाशकटिकया, सुवर्णव्यवहारः, अश्रूणि, विनोदयति, प्रातिवेशिकः ऋद्ध्या, रोदिति।

4. अधोलिखतानां क्रियापदानि वीक्ष्य समुचितं कर्तृपदं लिखत

(क) .... क्रीडावः।
(ख) .... विनोदयामि।
(ग) .... सुवर्णशकटिकया क्रीडिष्यसि।

(घ) .... अलीकं भणसि।

(ङ) किं निमित्तम् .... रोदिति।

5. अधोलिखितानां पदानां सन्धिविच्छेदं कुरुत

(क) कुतोऽस्माकम् = ...

(ख) पुनरपि = ...

(ग) किन्निमित्तम् = ...

(घ) पुनस्ताम् = ...

(ङ) यद्यस्माकम् = ...

(च) आभरणान्यवतार्य = ...

6. निर्दिष्टप्रकृतिप्रत्ययनिर्मितं पदं लिखत

(क) निः + श्वस् + ल्यप् = ...

(ख) अनु + कृ + क्त = ...

(ग) अलम् + कृ + क्त + टाप् = ...

(घ) अव + तृ + णिच् + ल्यप् = ...

(ङ) पूर् + क्त्वा = ...

(च) आ + दा + ल्यप् = ...

(छ) ग्रह् + क्त्वा = ...

(ज) उप + सृ + ल्यप् = ...

(झ) क्रीड् + क्त = ...

(ञ) प्र + मृज् + ल्यप् = ...

7. अधोलिखितानां पदानां विलोमपदानि लिखत

(क) सौवर्णशकटिका = ...

(ख) अलीकम् = ...

(ग) अलङ्कृता = ...

(घ) निष्क्रान्ता = ...

(ङ) अपेहि = ...

(च) परसम्पत्त्या = ...

8. अधोलिखितानां पदानां पर्यायवाचिपदानि लिखत

दारकः, पितुः, तर्कयामि, जननी, नीता, भणति, अलीकम्।

9. अधोलिखिताः पङ्क्तयः केन कं प्रति उक्ताः

(क) एहि वत्स! शकटिकया क्रीडावः।
(ख) आर्यायाः वसन्तसेनायाः समीपम् उपसर्पिष्यामि।
(ग) एहि मे पुत्रक! आलिङ्ग।
(घ) किं निमित्तं एष रोदिति।
(ङ) रदनिके! का एषा।
(च) जात! कारय सौवर्णशकटिकाम्।

10. पाठम् आश्रित्य सोदाहरणं वसन्तसेनायाः रोहसेनस्य च चारित्रिकवैशिष्ट्यम् हिन्दीभाषायां लिखत

योग्यताविस्तारः

सौवर्णशकटिका इति पाठस्य साभिनयं नाट्यप्रयोगं कुरुत

षष्ठः पाठः

आहारविचारः

प्रस्तुत पाठ **चरकसंहिता** के **'विमानस्थानम्'** प्रकरण के **'रसविमान'** नामक प्रथम अध्याय से संकलित है। यहाँ प्रयुक्त विमान शब्द का तात्पर्य रोगात्मक दोषों एवं ओषधियों के विज्ञान से है। इसमें बताया गया है कि स्वास्थ्य का मूल आधार समुचित आहार है। भोजन के प्रकार, उसकी मात्रा तथा उचित समय आदि का विधान ही इस अंश का वर्ण्य विषय है।

उष्णमश्नीयात्, उष्णं हि भुज्यमानं स्वदते, भुक्तं चाग्निमौदर्यमुदीरयति, क्षिप्रं जरां गच्छति, वातमनुलोमयति, श्लेष्माणं च परिह्रासयति, तस्मादुष्णमश्नीयात्।

स्निग्धमश्नीयात्, स्निग्धं हि भुज्यमानं स्वदते, क्षिप्रं जरां गच्छति, वातमनुलोमयति, शरीरमुपचिनोति, दृढीकरोतीन्द्रियाणि, बलाभिवृद्धि-मुपजनयति, वर्णप्रसादं चाभिनिर्वर्तयति; तस्मात् स्निग्धमश्नीयात्।

मात्रावदश्नीयात्, मात्रावद्धि भुक्तं वातपित्तकफानपीडयदायुरेव विवर्धयति केवलम् सुखं विपच्यते, न चोष्माणमुपहन्ति, अव्यथं च परिपाकमेति, तस्मान्मात्रावदश्नीयात्।

जीर्णेऽश्नीयात् अजीर्णे हि भुञ्जानस्याभ्यवहृतमाहारजातं पूर्वस्याहारस्य रसमपरिणतमुत्तरेणाहार-रसेनोपसृजत् सर्वान् दोषान् प्रकोपयत्याशु, जीर्णे तु भुञ्जानस्य स्वस्थानस्थेषु दोषेष्वग्नौ चोदीर्णे जातायां च बुभुक्षायां विवृतेषु च स्त्रोतसां मुखेषु विशुद्धे चोद्गारे हृदये विशुद्धे वातानुलोम्ये विसृष्टेषु च वातमूत्रपुरीषवेगेषु अभ्यवहृतमाहारजातं सर्वशरीरधातूनप्रदूषयदायुरेवाभिवर्धयति केवलम्, तस्माज्जीर्णेऽश्नीयात्।

वीर्याविरुद्धमश्नीयात्, अविरुद्धवीर्यमश्नन् हि विरुद्धवीर्याहार-जैर्विकारैर्नोपसृज्यते। तस्माद् वीर्याविरुद्धमश्नीयात्।

इष्टे देशे इष्टसर्वोपकरणं चाश्नीयात्। इष्टे हि देशे इष्टैः सर्वोपकरणैः सह भुञ्जानो नानिष्टदेशजैर्मनोविघातकरैर्भावैर्मनोविघातं प्राप्नोति। तस्मादिष्टे देशे तथेष्टसर्वोपकरणं चाश्नीयात्।

नातिद्रुतमश्नीयात्ः, अतिद्रुतं हि भुञ्जानस्योत्स्नेहनमवसादनं भोजनस्याप्रतिष्ठानं च भोज्यदोषः साद्गुण्योपलब्धि च न नियता, तस्मान्नातिद्रुतमश्नीयात्।

नातिविलम्बितमश्नीयात्; अतिविलम्बितं हि भुञ्जानो न तृप्तिमधिगच्छति, बहुभुक्तं शीतीभवत्याहारजातं विषमं च पच्यते, तस्मान्नातिविलम्बितमश्नीयात्।

अजल्पन्नहसन् तन्मना भुञ्जीत, जल्पतो हसतोऽन्यमनसो वा भुञ्जानस्य त एव दोषा भवन्ति य एवातिद्रुतमश्नतः, तस्माद-जल्पन्नहसंस्तन्मना भुञ्जीत।

शब्दार्थाः टिप्पण्यश्च

आहारः	–	आ + हृ + घञ् = भोजन।
औदर्यम्	–	उदर + यत्, उदर्य + अण्, उदरे भवः, (उदर में होने वाला) पेट की अग्नि का विशेषण।
वर्णप्रसादं चाभिनिर्वर्तयति	–	रंग रूप में, सौन्दर्य में निखार लाता है।
क्षिप्रं जरां गच्छति	–	जल्दी पच जाता है।
स्निग्धम्	–	स्निह् + क्त, चिकनाई घृत तैलादि से युक्त।
मात्रावत्	–	मात्रा + मतुप्, उचित मात्रा में।
उपचिनोति	–	उप् + चि + लट् + प्र.पु., ए.व., बढ़ाता है।
अव्यथम्	–	व्यथया रहितं यथा स्यात् तथा, अव्ययीभाव, क्रियाविशेषण, बिना कष्ट के सरलता से।
परिपाकम्	–	परि + पच् + घञ्, हाजमे को।
अजीर्णे	–	जॄ + क्त, न जीर्णे इति नञ् तत्पुरुष, न पचने पर।
अभ्यवहृतम्	–	अभि + अव + हृ + क्त, खाया हुआ।
उपसृजत्	–	उप + सृज् + शतृ, मिलता हुआ।
बुभुक्षा	–	भोक्तुम् इच्छा, भुज् + सन् + टाप्, भोजन की इच्छा।
विवृतम्	–	वि + वृ + क्त, खुला हुआ।
प्रकोपयत्याशु	–	शीघ्रता से बढ़ाता है।
विसृष्टेषु	–	वि + सृज् + क्त, सप्तमी बहुवचन, त्यागने पर, विसर्जन के उपरान्त।
उपसृज्यते	–	उप + सृज् + कर्मवाच्य, लट् लकार, प्र.पु. ए.व., ग्रस्त होता है।
इष्टसर्वोपकरणम्	–	इच्छित समस्त द्रव्य जैसे–चटनी, अचार आदि।
वातानुलोम्ये	–	वायु के अनुकूल होने पर।
इष्टम्	–	इष् + क्त, इच्छित।
अवसादनम्	–	अव + सद् + णिच् + ल्युट्, कष्टकारक।
उत्स्नेहम्	–	उल्टे मार्ग की ओर जाना, डकार आना, उल्टी होना।

अप्रतिष्ठानम्	–	न प्रतिष्ठानम्, नञ् तत्पुरुष, उचित स्थान पर न पहुँचना।
अजल्पत्	–	न जल्पत्, नञ् तत्पुरुष, बिना बोलते हुए।
मनोविघातम्	–	मनसः विघातम्, वि + हन् + घञ् द्वितीया एकवचन, तत्पुरुष, मानसिक कष्ट को।

अभ्यासः

1. संस्कृतेन उत्तरत

(क) एषः पाठः कस्मात् ग्रन्थात् उद्धृतः?
(ख) चरकसंहितायाः रचयिता कः?
(ग) कीदृशं भोजनम् इन्द्रियाणि दृढीकरोति?
(घ) अजीर्णे भुञ्जानस्य कः दोषः भवति?
(ङ) कीदृशं भोजनं श्लेष्माणं परिह्रासयति?
(च) कीदृशं भोजनं बलाभिवृद्धिम् उपजनयति?
(छ) इष्टसर्वोपकरणं भोजनं कुत्र अश्नीयात्?
(ज) कथं भुञ्जानस्य उत्स्नेहनस्य समाप्तिः न नियता?
(झ) अतिविलम्बितं हि भुञ्जानः कां न अधिगच्छति?
(ञ) जल्पतः हसतः अन्यमनसः वा भुञ्जानस्य के दोषाः भवन्ति?

2. उचितक्रियापदैः रिक्तस्थानानि पूरयत

(क) बहु भुक्तं आहारजातम् ....
(ख) अजल्पन् अहसन् ....
(ग) उष्णं हि भुज्यमानं ....
(घ) उष्णं भोजनं उदरस्य अग्निम् ....
(ङ) स्निग्धं भुज्यमानं भोजनम् शरीरम् ....
(च) मात्रावद् हि भुक्तं सुखं ....
(छ) अतिद्रुतं हि न ....
(ज) उष्णं भोजनं वातम् ....

3. अधोलिखितपदानां वाक्येषु प्रयोगं कुरुत

शीघ्रम्, उष्णम्, स्निग्धम्, तैलादियुक्तम्, विवर्धयति, अतिद्रुतम्, अतिविलम्बितम्, पच्यते।

4. अधोलिखितप्रकृतिप्रत्ययविभागं योजयत

यथा– जॄ + क्त नपुं., प्र. एकवचनम्	=	जीर्णम्।
अश् शतृ पुं. प्रथमा एकवचनम्	=	....
अभि वृध् णिच् लट् प्र. पु. एकवचनम्	=	....
उप + सृज् कर्मवाच्य, लट्, प्र. पु. एकवचनम्	=	....
इष् + क्त पुं. सप्तमी एकवचनम्	=	....
भुज् शानच्, पुं. षष्ठी, एकवचनम्	=	....
न हसन् इति	=	....
प्र + कुप् + णिच् लट्, प्र.पु. एकवचनम्	=	....
जन् + क्त स्त्रीलिङ्गम्	=	....
उप + चि + लट्, प्र. पु. एकवचनम्	=	....
अभि + नि + वृत् + णिच्, लट्लकार, प्र. पु. एकवचनम्	=	....

5. अधोलिखतानां पदानां सन्धिच्छेदं कुरुत

जीर्णेऽश्नीयात्, चोष्माणं, पूर्वस्याहारस्य, प्रकोपयत्याशु, दोषेष्वग्नौ, अभ्यवहृतम्, तस्माज्जीर्णे, चाश्नीयात्।

6. अधोलिखितेषु पदेषु विभक्तिं वचनं च दर्शयत

मुखेषु, सर्वान्, हृदये, वृद्धिम्, जराम्, भुञ्जानस्य।

7. पाठात् चित्वा विलोमशब्दान् लिखत

यथा– विरुद्धम्	अविरुद्धम्
अतिविलम्बितम्	....
जल्पन्	....
हसन्	....
जीर्णे	....
इष्टम्	....
तन्मनाः	....
अतिद्रुतम्	....

8. इष्टे देशे .... चाश्नीयात् इत्यस्य गद्यांशस्य आशयं हिन्दी भाषया स्पष्टं कुरुत

सप्तमः पाठः

सन्ततिप्रबोधनम्

प्रस्तुत पाठ महर्षि अरविन्द द्वारा संस्कृत में प्रणीत खण्डकाव्य **'भवानी भारती'** से संकलित किया गया है। जीवन के प्रारम्भिक चरण में अरविन्द घोष महान क्रान्तिकारी तथा राष्ट्रभक्त के रूप में उभरे। वह सशस्त्र क्रान्ति के समर्थक थे। ब्रिटिश सरकार ने उन्हें अलीपुर बम केस का अपराधी मान कर 1906 ई. में अलीपुर कारागार में बन्दी बना दिया।

कारावास की इसी अवधि में एक रात स्वप्न में बन्दिनी भारतमाता का दर्शन कर, भावाविष्ट मनोदशा में कवि ने इस ओजस्वी तथा राष्ट्रीय भावना से ओत-प्रोत शतककाव्य का प्रणयन किया। इस रचना में महाकवि अरविन्द ने भारतमाता को महाकाली, महालक्ष्मी एवं महासरस्वती के रूप में निरूपित किया है।

जीवन के उत्तरार्ध में महर्षि अरविन्द वेदों के व्याख्याता, महायोगी, महाकवि, **परमराष्ट्रभक्त** एवं महादार्शनिक के रूप में विश्वमञ्च पर प्रतिष्ठित हुए।

प्रस्तुत पाठ में भारतजननी परतन्त्रता एवं अज्ञानरूपी अन्धकार के बन्धनों में जकड़ी, अवमानना ग्रस्त अपनी सन्ततियों को उनके स्वर्णिम इतिहास का स्मरण कराते हुए, उन्हें प्रेरित करती है कि वे अपनी निद्रा का त्याग करें तथा अपने पराक्रम से राष्ट्र को पराधीनता के बन्धन से मुक्त करायें।

सान्द्रं तमिस्रावृतमार्तमन्धं
विलोक्य तद्भारतमार्यखण्डम्।।
गूढा रजन्यामरिभिर्विनष्टा
माता भृशं क्रन्दति भारतानाम्।।1।।

सनातनान्याह्वय भारतानां
कुलानि युद्धाय, जयोऽस्तु नो भीः।
भो जागृतास्मि क्व धनुः क्व खड्गः।
उत्तिष्ठतोत्तिष्ठत सुप्तसिंहाः।।2।।

माताऽस्मि भो! पुत्रक! भारतानां
सनातनानां त्रिदशप्रियाणाम्।
शक्तो न यान्पुत्र विधिर्विपक्षः
कालोऽपि नो नाशयितुं यमो वा।।3।।

ते ब्रह्मचर्येण विशुद्धवीर्याः
ज्ञानेन ते भीमतपोभिरार्याः।
सहस्रसूर्या इव भासुरास्ते
समृद्धिमत्यां शुशुभुर्धरित्र्याम्।।4।।

उत्तिष्ठ भो जागृहि सर्जयाग्नीन्
साक्षाद्धि तेजोऽसि परस्य शौरेः।
वक्षःस्थितेनैव सनातनेन
शत्रून्हुताशेन दहन्नटस्व॥5॥

अस्त्येव लोहं निशितश्च खड्गः
क्रूरा शतघ्नी नदतीह मत्ता।
कथं निरस्त्रोऽसि, मृतोऽसि शेषे
रक्ष स्वजातिं परहा भवाऽर्यः॥6॥

भो भो अवन्त्यो मगधाश्च बङ्गा
अङ्गाः कलिङ्गाः कुरुसिन्धवश्च।
भो दाक्षिणात्याः शृणुतान्ध्रचोलाः
शृण्वन्तु ये पञ्चनदेषु शूराः॥7॥

ये केचिदर्चन्ति ननु त्रिमूर्तिं
ये चैकमूर्तिं यवना मदीयाः।
माताऽऽह्वये वस्तनयान्हि सर्वान्
निद्रां विमुञ्चध्वमये शृणुध्वम्॥8॥

शब्दार्थाः टिप्पण्यश्च

सान्द्रम्	–	सघनम्; (सह अन्द्रेण), सघन, गहन।
तमिस्त्रावृतम्	–	तिमिरावृतम्; तमिस्त्रेण आवृतम् (तृ. तत्पु.), अन्धकार से ढका हुआ।
आर्तम्	–	पीडितम्; दुःखी।
गूढा	–	निक्षिप्ता, छिपी हुई, डूबी हुई।
भृशम्	–	अत्यधिकम्, बहुत अधिक।
भीः	–	भयम्, डर।
नो अस्तु	–	न भवतु, न हो।

खड्गः	–	असिः, तलवार।
पुत्रक!	–	हे बालक (पुत्र + कन्), हे पुत्र।
त्रिदशप्रियाणाम्	–	देवप्रियाणाम्, (तिस्रः दशाः येषां तेषां) देवताओं के प्रियों का।
विपक्षः	–	शत्रुपक्षः (विरुद्धः पक्षः यस्य सः), शत्रुपक्ष।
विधिः	–	शासनम्; शासन।
विशुद्धवीर्याः	–	परिष्कृतपराक्रमाः (विशुद्धं वीर्यं येषां ते), अत्यधिक पराक्रम वाले।
भीमतपोभिः	–	घोरपरिश्रमैः, अत्यधिक परिश्रमों से।
आर्याः	–	श्रेष्ठाः, श्रेष्ठ।
भासुरा	–	भासमानाः (भास् + घुरच् प्रत्यय) दीप्तिमान।
समृद्धिमत्याम्	–	समृद्धियुक्त्याम् समृद्धि + मतुप् + ङीप् स. ए.व., समृद्धिशाली पर।
शुशुभुः	–	शोभायमानाः जाताः (शुभ् लिट् लकार); सुशोभित हुए।
शौरेः	–	कृष्णस्य, शौरि ष. ए. व. (शूर + इञ्), कृष्ण के।
हुताशेन	–	अग्निना, हुतं अश्नाति यः सः तेन, अग्नि के द्वारा।
सर्जय	–	सर्जनं कुरु (सृज् लोट् लकार णिजन्त म. पु. ए. व.), उत्पन्न करो।
शतघ्नी	–	तोपनामाख्यं अस्त्रम् (शतं हन्ति या सा), तोप।
क्रूरा	–	निष्ठुरा, निष्करुणा, भयंकर।
निशितः	–	उद्दीप्तः (नि + शी + क्त), पैना किया गया।
परहा	–	शत्रुघ्नः (परान् हन्ति), शत्रुओं को मारने वाला।
त्रिमूर्तिम्	–	ब्रह्मविष्णुमहेशाख्यानां देवानाम् मूर्तिम् (त्रयाणां देवानां मूर्तिम्), त्रिदेवों की मूर्ति को।
एकमूर्तिम्	–	एकेश्वरम्, एक निराकार परमेश्वर को।
वः	–	तव, तुम्हारे।
आह्वये	–	आकारयामि, पुकारती हूँ।

अभ्यासः

1. संस्कृतेन उत्तरं दीयताम्

(क) भारतानां माता कं विलोक्य भृशं क्रन्दति?
(ख) रजन्यां गूढा माता कैः विनष्टा?
(ग) के उत्तिष्ठन्तु?
(घ) पुत्रक! केषां भारतानां माता अस्मि?
(ङ) कः भारतपुत्रान् नाशयितुं शक्तः?
(च) ते (शूराः) केन विशुद्धवीर्याः आसन्?
(छ) त्वं परस्य शौरेः किम् असि?
(ज) कविना कुत्रत्याः कुत्रत्याः शूराः आहूयन्ते?
(झ) मदीया यवनाः कम् अर्चयन्ति?
(ञ) सर्वान् तनयान् का आह्वयति?

2. हिन्दीभाषया आशयं लिखत

(क) गूढा रजन्यामरिभिर्विनष्टा माता भृशं क्रन्दति भारतानाम्।
(ख) भो जागृतास्मि क्व धनुः क्व खड्गः उत्तिष्ठतोत्तिष्ठत सुप्तसिंहाः।।

3. रिक्तस्थानानि पूरयत

(क) भारतानां विनष्टा माता .... ।
(ख) भो पुत्रक! .... माताऽस्मि।
(ग) भो! उत्तिष्ठ .... सर्जय।
(घ) अहं माता .... आह्वये।
(ङ) ये ....श‍ृण्वन्तु।

4. अधोलिखितेषु विशेष्यविशेषणयोः समुचितं मेलनं कुरुत

	विशेषणम्	विशेष्यम्
(क)	क्रूरा	कुलानि
(ख)	विनष्टा	धरित्र्याम्
(ग)	सनातनानि	खड्गः
(घ)	समृद्धिमत्याम्	माता
(ङ)	निशितः	तनयान्
(च)	सर्वान्	शतघ्नी

5. अधोलिखितानां पदानां वाक्येषु प्रयोगं कुरुत

उत्तिष्ठ, सर्जय, क्व, सुप्तसिंहा, माता, शत्रून्, रक्ष, बङ्गाः, अर्चन्ति, आह्वये।

6. विभक्तिं योजयित्वा रिक्तस्थानानि पूरयत

(क) बालिका .... स्वपिति (रजनी, सप्तमी विभक्ति, एकवचन)
(ख) हे वीर! .... उत्तिष्ठ (युद्ध, चतुर्थी विभक्ति, एकवचन)
(ग) ते .... आर्याः जाताः। (तपस्, तृतीया विभक्ति, बहुवचन)
(घ) माता .... पुत्रान् आह्वयति (सर्व, द्वितीया विभक्ति, बहुवचन)
(ङ) शूराः .... वसन्ति। (पञ्चनद, सप्तमी विभक्ति, बहुवचन)

7. अधोलिखितेषु यथास्थानं सन्धिं सन्धि-विच्छेदं वा कुरुत

(क) सनातनानि + आह्वय = ...
(ख) जयोऽस्तु = ... + ...
(ग) भासुराः + ते = ...
(घ) शुशुभुर्धरित्र्याम् = ... + ...
(ङ) जागृतास्मि = ... + ...
(च) स्थितेन + एव = ...
(छ) अस्ति + एव = ...

8. अधोलिखितस्य श्लोकस्य अन्वयं कुरुत

माताऽस्मि भो! पुत्रक! भारतानां
कुलानि युद्धाय जयोऽस्तु नो भीः।
भो जागृतास्मि क्व धनुः क्व खड्गः
उत्तिष्ठतोत्तिष्ठत सुप्तसिंहाः।।

9. अधोलिखितेषु अलङ्कारं निर्दिशत

(क) सहस्रसूर्या इव भासुरास्ते
समृद्धिमत्यां शुशुभुर्धरित्र्याम्।

(ख) भो भो अवन्त्यो मगधाश्च बङ्गाः
अङ्गाः कलिङ्गाः कुरुसिन्धवश्च।।

10. अधोलिखिते श्लोके प्रयुक्तस्य छन्दसः नाम लिखत

ते ब्रह्मचर्येण विशुद्धवीर्याः
ज्ञानेन ते भीमतपोभिरार्याः।
सहस्रसूर्या इव भासुरास्ते
समृद्धिमत्यां शुशुभुर्धरित्र्याम्।।

योग्यताविस्तारः

अधोलिखितानां सूक्तीनां सन्ततिप्रबोधनम् इति पाठेन भावसाम्यम् अनुसन्धाय तुलना कार्या

(क) उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत। ***कठोपनिषद्***

(ख) माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः। ***अथर्ववेदः***

(ग) शूरस्य मरणं तृणम्।

(घ) अपि स्वर्णमयी लङ्का न मे लक्ष्मण रोचते।
जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी।।

महाभारते विदुरायाः सन्देशेन सन्ततिप्रबोधनस्य भावसाम्यं प्रतिपादयत।

अष्टमः पाठः

दयावीर कथा

प्रस्तुत पाठ मैथिली, संस्कृत और अपभ्रंश (अवहट्ठ) के प्रसिद्ध कवि विद्यापति द्वारा विरचित **'पुरुष-परीक्षा'** नामक कथाग्रन्थ से सङ्कलित किया गया है। विद्यापति का जन्म चतुर्दश शताब्दी (1360-1448) में मिथिला क्षेत्र के विसफी ग्राम में हुआ था। 'विद्यापति-पदावली' इनकी लोकविश्रुत रचना है। इन्होंने संस्कृत में विविधविषयक 12 ग्रन्थों की रचना की है।

'पुरुष-परीक्षा' में सच्चे पुरुष की परख कैसे की जाये-यह बताने के लिए वासुकि नामक मुनि पारावार नामक राजा को अनेक कथाएँ सुनाते हैं। प्रस्तुत कथा में राजा हम्मीरदेव को दयावीर के रूप में चित्रित किया गया है। कथा के अनुसार राजा हम्मीरदेव ने सम्राट् अलाउद्दीन के कोप का भाजन बने शरणागत मुहम्मद शाह (सेनापति) की प्राणपण से रक्षा की है।

दयालुः पुरुषः श्रेष्ठः सर्वजन्तूपकारकः।
तस्य कीर्तनमात्रेण कल्याणमुपपद्यते॥

अस्ति कालिन्दीतीरे योगिनीपुरं नाम नगरम्। तत्र अलावदीनो नाम यवनराजो बभूव। स चैकदा केनापि निमित्तेन महिमासाहिनाम्ने सेनानिने अकुप्यत्। स च यवनस्वामिनं प्रकुपितं प्राणग्राहकं च ज्ञात्वा चिन्तयामास, सामर्षो राजा विश्वसनीयो न भवति। तदिदानीं यावदनिरुद्धोऽस्मि तावदेवेतः क्वापि गत्वा निजप्राणरक्षां करोमीति परामृश्य सपरिवारः पलायितः। पलायमानोऽप्यचिन्तयत् यत्सपरिवारस्य दूरगमनमशक्यम्। परिवारं परित्यज्य पलायनमपि नोचितम्। यतः

जीवितार्थं कुलं त्यक्त्वा योऽतिदूरं जनो व्रजेत्।
लोकान्तरगतस्येव किं तस्य जीवितेन वा॥

तदिहैव दयावीरं हम्मीरदेवं समाश्रित्य तिष्ठामीति परामृश्य स यवनो हम्मीरदेवमुपगम्याह देव! विनापराधं हन्तुमुद्यतस्य स्वामिनस्त्रासेनाहं तव शरणमागतोऽस्मि। यदि मां रक्षितुं शक्नोषि तदा विश्वासं देहि। नो चेदितोऽन्यत्र गच्छामि।

राजोवाच-यवन! मम शरणागतं मयि जीवति यमोऽपि त्वां पराभवितुं न शक्नोति, किं पुनर्यवनराजः? तदभयं तिष्ठ।

ततस्तस्य राज्ञो वचनेन स यवनसचिवस्तस्मिन् रणस्तम्भनाम्नि दुर्गे निःशङ्कमुवास। क्रमेण यवनराजस्तत्रावस्थितं तं विदित्वा परमसामर्षः करितुरगपदाति- पदाघातैर्धरित्रीं चालयन् दुर्गद्वारमागत्य हम्मीरदेवेन साकं युद्धं कृतवान्, परं जयं न लब्धवान्।

प्रथमयुद्धानन्तरं यवनराजेन हम्मीरदेवं प्रति दूतः प्रहितः। दूत उवाच-राजन् हम्मीर! श्रीमान् यवनराजस्त्वामादिशति यन्ममापथ्यकारिणं महिमासाहिं परित्यज्य देहि। यद्येनं न दास्यसि तदा श्वस्तने प्रभाते तव दुर्गं तुरगखुराघातैश्चूर्णावशेषं कृत्वा महिमासाहिना सह त्वामन्तकपुरं

नेष्यामि। हम्मीरदेव उवाच-रे दूत! त्वमवध्योऽसि। तवाहं किं करवाणि? अस्योत्तरं तव स्वामिने खड्गधाराभिरेव दास्यामि न वचोभिः। मम शरणागतं यमोऽपि विपक्षदृष्ट्या वीक्षितुं न शक्नोति किं पुनर्यवनराजः?

ततो निर्भर्त्सिते दूते गते सति यवनराजः कुपित्वा युद्धसमुद्धरो बभूव। एवमुभयोरपि बलयोर्युद्धेऽर्धावशिष्टसुभटे यवनसैन्ये दुर्गे ग्रहीतुमशक्ये यवनराजः परावृत्य निजनगरगमनाकाङ्क्षी बभूव। तञ्च भग्नोद्यमं दृष्ट्वा रायमल्लरामपालनामानौ हम्मीरदेवस्य द्वौ सचिवौ दुष्टौ यवनराजमागत्य मिलितौ। तावूचतुः यवनराज! भवता क्वापि न गन्तव्यम्। दुर्गे दुर्भिक्षमापतितम्। श्वः परश्वो वा दुर्गं ग्राहयिष्यावः। ततस्तौ दुष्टसचिवौ पुरस्कृत्य यवनराजेन दुर्गद्वाराण्यवरुद्धानि।

तथा सङ्कटं दृष्ट्वा हम्मीरदेवः स्वसैनिकान् प्रत्युवाच - रे रे योद्धारः! परिमितबलोऽप्यहं शरणागतकरुणया प्रवृद्धबलेनापि यवनराजेन समं योत्स्यामि। ततो यूयं सर्वे दुर्गाद्बहिः स्थानान्तरं गच्छत। त ऊचुः-भवान् निरपराधो राजा (शरणागतस्य) यवनस्य करुणया सङ्ग्रामे मरणमङ्गीकुरुते। वयं भवतो जीव्यभुजः कथमिदानीं भवन्तं स्वामिनं परित्यज्य कापुरुषपदवीमनुसरिष्यामः? किञ्च श्वस्तने प्रभाते देवस्य शत्रुं हत्वा प्रभोर्मनोरथं साधयिष्यामः। यवनस्त्वयं वराकः स्थानान्तरं प्रहीयताम्। तेन रक्षणीयरक्षा सम्भवति। यवन उवाच-देव! किमर्थं ममैकस्य विदेशिनो रक्षार्थं सपुत्रकलत्रं स्वकीयराज्यं विनाशयिष्यसि? ततो मां परित्यज्य देहि। राजोवाच-यवन! मैवं ब्रूहि। यतः

भौतिकेन शरीरेण नश्वरेण चिरस्थितम्।
लप्स्यमानं यशः को वा परिहर्तुं समीहते॥

किञ्च यदि मन्यसे तदा निर्भयस्थानं त्वां प्रापयामि। यवन उवाच-राजन् मैवं ब्रूहि। सर्वप्रथमं मयैव विपक्षशिरसि खड्गप्रहारः कर्तव्यः।

ततः प्रभाते युद्धे प्रवर्त्तमाने हम्मीरदेवः सत्वर-तुरगारूढो निजसुभटसार्थसहितः पराक्रमं कुर्वाणो दुर्गान्निःसृत्य खड्गधारा-प्रहारैर्विपक्षबलवाजिनः पातयन् कुञ्जरान् घातयन्, कबन्धान् नर्तयन् रुधिरधाराप्रवाहेन मेदिनीमलङ्कृत्य शर-शल्लितसर्वाङ्गस्तुरगपृष्ठे त्यक्तप्राणः सम्मुखः सङ्ग्रामभूमौ निपपात सूर्यमण्डलभेदी अभवत्।

शब्दार्थाः टिप्पण्यश्च

सर्वजन्तूपकारकः	–	सर्वेषां जन्तूनाम् उपकारकः, ष. त., सभी प्राणियों का उपकार करने वाला।
चैकदा	–	च + एकदा = एक समय।
प्रकुपितम्	–	प्र + कुप् + क्त, अत्यन्त क्रोधित हुए।
चिन्तयामास	–	चिन्तित हुआ।
सामर्षः	–	क्रोधयुक्त।
अनिरुद्धः	–	नि + रुध् + क्त = निरुद्धः, न निरुद्धः = अनिरुद्धः, (नञ्) न पकड़ गया।
तदिहैव	–	तत् + इह + एव, अतः यहीं।
समाश्रित्य	–	सम् + आ + श्रि + ल्यप्, आश्रय लेकर।
परामृश्य	–	परा + मृश् + ल्यप्, विचार करके।
उपगम्य	–	उप + गम् + ल्यप्, समीप जाकर।
करितुरगपदाघातैः	–	करिणः तुरगाश्च-करितुरगाः, तेषां पदानाम् आघातः तैः, हाथियों, घोड़ों एवं पैदल सेना के पैरों के आघात से।
धरित्रीम्	–	पृथ्वी को।
चालयन्	–	चल् + णिच् + शतृ, कँपाते हुए।
प्रहितः	–	प्र + हि + क्त, भेजा।
ममापथ्यकारिणम्	–	मेरे विरोधी का।
श्वस्तने	–	आने वाले कल में।
तुरगखुराघातैः	–	घोड़ों के खुरों के आघात (टाप) से।
चूर्णावशेषम्	–	चूर चूर मात्र शेष।
अन्तकपुरम्	–	यमलोक।
अवध्यः	–	मारने योग्य नहीं।
वीक्षितुम्	–	वि + ईक्ष् + तुमुन्, देखने के लिए।
निर्भर्त्सिते	–	निर् + भर्त्स् + क्त, फटकारे गए।
बभूव	–	भू + लिट् प्रथम पुरुष एकवचन (परोक्षभूत) हुआ।
बलयोः	–	दोनों सेनाओं के।
अर्धावशिष्टसुभटे	–	आधे बचे सैनिकों वाले।

परावृत्य	–	लौटकर।
भग्नोद्यमम्	–	विफल पराक्रम का।
तावूचतुः	–	तौ + ऊचतुः वच् + लिट् प्रथम पुरुष द्विवचन, उन दोनों ने कहा।
दुर्भिक्षम्	–	अकाल।
परश्वः	–	परसों (आने वाला)।
परिमितबलः	–	कम सेना वाला।
प्रवृद्धबलेन	–	बड़ी सेना वाले ने।
ऊचुः	–	वच् + लिट् उत्तमपुरुष बहुवचन, कहा।
जीव्यभुजः	–	जीविका का उपभोग करने वाले।
कापुरुषः	–	कायर (नीच) पुरुष।
वराकः	–	बेचारा, अभागा।
प्रहीयताम्	–	भेज दीजिए।
सपुत्रकलत्रम्	–	पुत्र और स्त्री के साथ।
लप्स्यमानम्	–	प्राप्त होने वाले।
समीहते	–	चाहता है।
विपक्षबलवाजिनः	–	शत्रुओं की सेना के घोड़ों को।
कुञ्जरान्	–	हाथियों को।
पातयन्	–	पत् + णिच् + शतृ, गिराते हुए।
कबन्धान् नर्तयन्	–	कं मुखं बध्नाति–कबन्धः, तान्, नृत् + णिच् + शतृ, कटे हुए शरीर के धड़ को नचाते हुए।
मेदिनीमलङ्कृत्य	–	पृथ्वी को शोभित (रंग) करके।
शरशल्लितसर्वाङ्गः	–	बाणों से खण्ड-खण्ड हुए सर्वाङ्ग शरीर वाले।
सूर्यमण्डलभेदी	–	सूर्यमण्डल का भेदन करने वाला अर्थात् वीरगति को प्राप्त।

अभ्यासः

1. संस्कृतभाषया उत्तरत

(क) पुरुषपरीक्षायाः लेखकः कः?

(ख) अलावदीनो नाम यवनराजः कस्मै अकुप्यत्?

(ग) महिमासाहिसेनानी प्राणरक्षायै कुत्र अगच्छत्?
(घ) हम्मीरदेवः यवनसेनानिनं प्रति किमवदत्?
(ङ) हम्मीरदेवेन निर्भर्त्सिते दूते यवनराजः किमकरोत्?
(च) भग्नोद्यमं यवनराजं दृष्ट्वा तमागत्य कौ मिलितौ?
(छ) युद्धसङ्कटमवलोक्य हम्मीरदेवः स्वसैनिकान् प्रति किमकथयत्?
(ज) 'मां परित्यज्य देहि' इत्युक्तवति यवनसचिवे हम्मीरदेवः तं प्रति किमवदत्?
(झ) शरणागतरक्षायै कः वीरगतिमलभत?

2. अधोलिखितानां पदानां वर्तमानकाले प्रचलिताः संज्ञाः लिखतः

अलावदीनः, रणस्तम्भदुर्गः, योगिनीपुरम्, यवनराजः।

3. आशयं स्पष्टीकुरुत

(क) जीवितार्थं कुलं त्यक्त्वा योऽतिदूरं जनो व्रजेत्।
लोकान्तरगतस्येव किं तस्य जीवितेन वा।।

(ख) वयं भवतो जीव्यभुजः कथमिदानीं भवन्तं स्वामिनं
परित्यज्य कापुरुषपदवीमनुसरिष्यामः।

4. प्रकृतिप्रत्ययविभागः क्रियताम्

ज्ञात्वा, दृष्ट्वा, हत्वा, परित्यज्य, पुरस्कृत्य, अलङ्कृत्य, घातयन्, पलायमानः।

5. प्रकृतिं प्रत्ययं च योजयित्वा पदरचनां कुरुत

विद् + क्त्वा, परा + मृश् + ल्यप्, निर् + सृ + ल्यप्, पत् + णिच् + (इ) + शतृ, कृ + शानच्, रक्ष् + तुमुन्।

6. अधोलिखितशब्दान् आश्रित्य वाक्यरचनां कुरुत

कुपित्वा, परामृश्य, अलङ्कृत्य, नर्तयन्, कुर्वाणः, गन्तव्यम्, पलायमानः, रक्षितुम्, लब्धवान्।

7. सन्धिविच्छेदः क्रियताम्

सामर्षः, भग्नोद्यमम्, ममैकस्य, यमोऽपि, गतस्येव, मयैव, तुरगारूढः, इहैव, चूर्णाविशेषम्।

8. अधोलिखिताव्ययपदान्याधृत्य संस्कृते वाक्यरचनां कुरुत

तत्र, यतः, इह, तदा, ततः, च, यदि, श्वः, परश्वः।

योग्यताविस्तारः

सत्याहिंसादयादयः सद्गुणाः सदाचारस्य स्वरूपं निर्धारयन्ति। साधुभिः सदैव दयादयः गुणाः परिपालिताः। दयासदृशमिह परत्र च न किंचिदपि वर्तते। अतः सर्वेषु भूतेषु दया कर्तव्या।

नात्मनोऽपि प्रियतरः पृथिवीमनुसृत्य ह।
तस्मात् प्राणिषु सर्वेषु दयावानात्मवान् भवेत्॥

(*महाभारतम्, अनु. 116-22*)

आर्तत्राणाय वः शस्त्रं न प्रहर्तुमनागसि।

(*अभिज्ञानशाकुन्तलम्-प्रथमाङ्क*)

आर्तानामिह जन्तूनामार्तिच्छेदं करोति यः।
शङ्खचक्रगदाहीनो द्विभुजः परमेश्वरः॥

नवमः पाठः

विज्ञाननौका

प्रस्तुत पाठ 1933 में पुरी (उड़ीसा) में जन्मे कवि प्रो. श्रीनिवास रथ द्वारा रचित कविता-संग्रह **तदेव गगनं सैव धरा** से संगृहीत है। श्रीनिवास रथ बाल्यकाल से मध्यप्रदेश के विभिन्न नगरों में रहे तथा अपने पिता से पारम्परिक पद्धति द्वारा संस्कृत का अध्ययन करने के पश्चात् उच्चशिक्षा इन्होंने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में प्राप्त की। ये विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन में संस्कृत विभाग में प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष रहे।

प्रायः 40 वर्षों से ये संस्कृत में गीत लिखते आ रहे हैं। इनके गीतों का उपर्युक्त संग्रह हिन्दी अनुवाद के साथ प्रकाशित हो चुका है।

प्रस्तुत पाठ में आधुनिक विश्व में यान्त्रिकता और कृत्रिमता के प्रति बढ़ते हुए मोह के प्रति सचेत किया जा रहा है कि जीवन मूल्यों को भुलाकर नई भौतिक तकनीकी से मानव को अभिभूत नहीं होना चाहिए।

विज्ञाननौका समानीयते
ज्ञानगङ्गा विलुप्तेति नालोक्यते॥

संस्कृतोद्यानदूर्वा दरिद्रीकृता
निष्कुटेषु स्वयं कण्टकिन्याहिता।
पुष्पितानां लतानां न रक्षा कृता
विस्तृता वाटिकायोजना निर्मिता॥

के कथं कुत्र वा क्रन्दनं कुर्वते
राजनीतिश्मशानेषु न ज्ञायते। विज्ञाननौका.....

वर्तमानस्थितिर्मानवानां कृते
प्रत्यहं दुर्निमित्तैव संलक्ष्यते।
यत्र कुत्रापि शान्तिः समुद्वीक्ष्यते
तत्र विध्वंसबीजं समायोज्यते॥

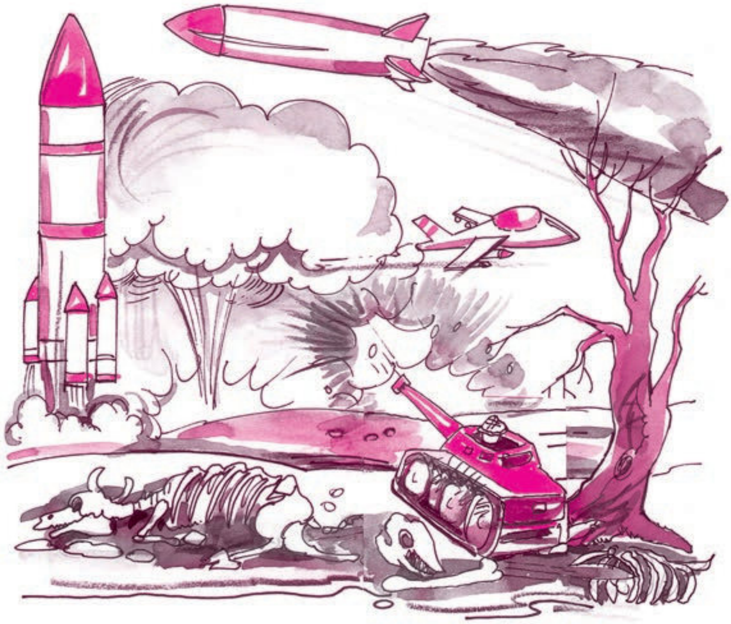

सर्वनाशार्थविद्यैव विद्योतते
स्वार्थरक्षावलम्बोऽपि नो चिन्त्यते। विज्ञाननौका.....

तारकायुद्धसम्भावनाऽधीयते
गोपनीयायुधानां कथा श्रूयते।
विश्वशान्तिप्रयत्नेषु संदृश्यते
विश्वसंहारनीतिर्यथोपास्यते॥

भूतले जीवरक्षा परिक्षीयते
जीवनाशाऽन्तरिक्षेऽनुसन्धीयते। विज्ञाननौका.....

विश्वबन्धुत्वदीक्षागुरूणां व्रतं
धर्मसंस्कारतत्त्वं बतास्तं गतम्।
लोककल्याणशिक्षासमाराधनं
हन्त! विक्रीयते काव्य-सङ्कीर्तनम्॥

यन्त्रमुग्धान्धताऽहर्निशं सेव्यते
संस्कृतिज्ञानरक्षा न सञ्चिन्त्यते। विज्ञाननौका.....

शब्दार्थाः टिप्पण्यश्च

समानीयते – सम् + आ + नी कर्मवाच्य, लट् प्र. पु. ए.व., लाई जा रही है।

विलुप्ता – वि + लुप् + क्त + टाप् स्त्री., लुप्त हो गई है।

आलोक्यते – आ + लोक् कर्मवाच्य, दिखाई दे रही है।

दूर्वा – दूब, घास।

दरिद्रीकृता – अदरिद्रा दरिद्रा कृता, दरिद्र + च्वि + कृ + क्त स्त्री. प्र.पु. ए.व., गरीब बना दी गई।

निष्कुटेषु – घरेलू उद्यानों में, क्रीडोद्यान।

कण्टकिनी – केक्टस (नागफनी)

आहिता – आ + धा + क्त, स्त्री., लगाई।

वाटिकायोजना – वाटिकानां योजना, बगीचियों का निर्माण।

निर्मिता – निर् + मा + क्त, स्त्री. प्र.पु. ए.व., निर्माण किया गया, बनाई गई।

प्रत्यहं – अहनि अहनि, अव्ययीभाव समास, प्रतिदिन।

दुर्निमित्ता – दुष्टं निमित्तं यस्याः सा, (बहुव्रीहिः), अमांगलिक।

संलक्ष्यते – सम् + लक्ष्य् + कर्मवाच्य, लट्लकार, प्र.पु. ए.व., दिखाई दे रही है।

समुद्वीक्ष्यते – सम् + उत् + वि + ईक्ष् कर्मवाच्य, लट्लकार, प्र.पु., दिखाई दे रही है।

विध्वंसबीजम् – विध्वंसस्य बीजं, ष. तत्पुरुष, विनाश का बीज।

समायोज्यते	–	सम् + आ + युज् + णिच् + कर्मवाच्य लट्, प्र.पु., ए.व. बोया जा रहा है।
सर्वनाशार्थविद्या	–	सर्वनाश + अर्थविद्या सभी पदार्थों का विनाश करने वाली विद्या।
विद्योतते	–	वि. उपसर्ग, द्युत् धातु, लट् लकार प्र.पु. ए.व., चमक रही है, दिखाई दे रही है।
स्वार्थरक्षावलम्बोऽपि	–	स्वार्थरक्षा + अवलम्बः + अपि, स्वार्थस्य रक्षायाः अवलम्बः, ष. तत्पु., स्वार्थरक्षा का आश्रय भी।
तारकायुद्धसम्भावना	–	तारकाणां युद्धस्य सम्भावना, (स्टार वार)।
आधीयते	–	आ + धा + कर्मवाच्य, लट्, प्र.पु. ए.व., सिखाई जा रही है, की जा रही है।
गोपनीयायुधानां	–	गोपनीय आणविक अस्त्र-शस्त्र आदि।
विश्वसंहारनीतिर्यथोपास्यते	–	विश्वसंहारनीतिः + यथा + उपास्यते, जैसे विश्व के विनाश की नीति सिखाई जा रही है।
उपास्यते	–	उप + आस् कर्मवाच्य लट् प्र.पु., उपासना की जा रही है।
परिक्षीयते	–	परि + क्षि + कर्मवाच्य, लट्, प्र.पु. ए.व. क्षीण हो रही है।
जीवनाशाऽन्तरिक्षेऽनुसन्धीयते	–	जीवन + आशा + अन्तरिक्षे + अनुसन्धीयते, जीवन की आशा आकाश में ढूँढ़ी जा रही है।
अनुसन्धीयते	–	अनु + सम् + धा, कर्मवाच्य, लट्, प्र.पु. ए.व., अनुसन्धान किया जा रहा है।
बतास्तंगतम्	–	बत + अस्तं गतम्, खेद है कि नष्ट हो गई।
विक्रीयते	–	वि + क्री + कर्मवाच्य, लट्, प्र.पु. ए.व., बेचा जा रहा है।
यन्त्रमुग्धान्धता	–	यन्त्रों के मोह का अन्धकार।
अहर्निशं	–	अहः च निशा च, द्वन्द्व समास, दिन रात।
सञ्चिन्त्यते	–	सम् + चिन्त् + कर्मवाच्य, लट् प्र.पु., ए.व., सोचा जा रहा है।

अभ्यासः

1. **संस्कृतेन उत्तरं दीयताम्**

   (क) एषा गीतिका कस्मात् पुस्तकात् संगृहीता?
   (ख) अस्या: गीतिकाया: लेखक: क:?
   (ग) अत्र का दरिद्रीकृता?
   (घ) निष्कुटेषु का आहिता?
   (ङ) वाटिकायोजनायां केषां कासां च रक्षा न कृता?
   (च) राजनीति-श्मशानेषु किं न ज्ञायते?
   (छ) मानवानां कृते वर्त्तमान-स्थिति: कीदृशी संलक्ष्यते।
   (ज) आधुनिकयुगे कस्या: अवलम्ब: न चिन्त्यते?
   (झ) विश्वशान्तिप्रयत्नेषु का उपास्यते?
   (ञ) जनै: अहर्निशं का सेव्यते?

2. **रिक्तस्थानानि पूरयत**

   (क) ज्ञानगङ्गा ············ नालोक्यते?
   (ख) के कथं कुत्र वा ············ कुर्वते?
   (ग) यत्र कुत्रापि ············ समुद्वीक्ष्यते।
   (घ) गोपनीयायुधानां ············ श्रूयते।
   (ङ) भूतले ············ परिक्षीयते।

3. **'संस्कृतोद्यानदूर्वा ············ निर्मिता'** अस्य श्लोकस्य आशय: हिन्दीभाषया स्पष्टीक्रियताम्

4. **अधोलिखितपदानां संस्कृतवाक्येषु प्रयोगं कुरुत**

   ज्ञानगङ्गा, ज्ञायते, शान्ति:, विद्योतते, संदृश्यते जीवरक्षा, विक्रीयते।

5. **'वर्तमान ············ समायोज्यते'** अस्य श्लोकस्य अन्वयं कुरुत

6. **अधोलिखितपदेषु सन्धिं सन्धिच्छेदं वा कुरुत**

   विलुप्तेति, कण्टकिनी + आहिता, प्रत्यहं, बत + अस्तं, अन्तरिक्षे + अनुसन्धीयते, यथोपास्यते।

योग्यताविस्तारः

1. विज्ञानं न केवलं सुखकरम् अस्ति अपितु दु:खस्य मूलम् अपि अस्ति। यथा श्रीरथमहोदय: कथयति-यानि उपकरणानि अन्तरिक्षमण्डले प्रक्षेपितानि सन्ति,

तेषु केचित् उपग्रहाः तु सन्देशवहनाय उपयुक्ताः भवन्ति परं अन्ये अनेके उपग्रहाः धूमकेतव इव खगोलकक्षासु भ्रमन्तः तिष्ठन्ति। लक्षाधिकाः कन्दुकाकाराः अवकरसमूहाः विविधेषु वलयेषु पृथ्वीं परितः भ्रमन्ति। क्वचित् क्रमशः कक्षान्तरं साधयित्वा गुरुत्वाकर्षणवशात् तादृशः अवकरः धूलिकणरूपेण भूमौ आपतति।

2. प्राचीनभारते विज्ञानम्

प्राचीनकाले समयस्य सूक्ष्मातिसूक्ष्मं स्वरूपं ज्ञातुं यन्त्राणां सहायता गृह्यते स्म। एतस्य कृते वेधशालानां निर्माणं क्रियते स्म। तत्कालीनानां यन्त्राणां उल्लेखः शास्त्रेषु उपलभ्यते। यथा

दिनगतकालावयवा ज्ञातुमशक्या यतो विना यन्त्रैः।
वक्ष्ये यन्त्राणि ततः स्फुटानि सङ्क्षेपतः कतिचित्।
गोलो नाडीवलयं यष्टिः शङ्कुर्घटी चक्रम्।
चापं तुर्यं फलकं धीरेकं पारमार्थिकं यन्त्रम्॥

सूर्यसिद्धान्तादिशास्त्रेषु भूगोल-खगोलविषयकं ज्ञानम् उपलभ्यते। यथा

भगवन्! किम्प्रमाणा भूः किमाकारा किमाश्रया।
किं विभागा कथं चात्र सप्तपातालभूमयः॥

अहोरात्रव्यवस्थां च विदधाति कथं रविः।
कथं पर्येति वसुधां भुवनानि विभावयन्॥

कथं पर्येति वसुधां भुवनानि विभावयन्।
भूमेरुपर्युपर्यूर्ध्वाः किमुत्सेधाः किमन्तराः॥

न्यायवैशेषिकशास्त्रेषु अपि सप्तमौलिकपदार्थानाम् उल्लेखः पूर्वतः एव उपलभ्यते। तत्र द्रव्य-गुण-कर्म-सामान्य-विशेष- समवाय-अभावादीनां भेदप्रभेदादिक्रमः सविस्तरं वर्तते।

3. **श्रीश्रीनिवासरथविरचितस्य अस्य गीतस्य तथैव अधोलिखितस्य अन्यस्य गीतस्यापि अभ्यासः श्रव्य-साधनैः कर्तुं शक्यते-**

जीवनगतिरनुदिनमपरा
तदेव गगनं सैव धरा॥

पापपुण्यविधुरा धरणीयं
कर्मफलं भवताऽऽदरणीयम्।
नैतद्वचोऽधुना रमणीयम्
तथापि सदसद् विवेचनीयम्॥

दशमः पाठः

कन्थामाणिक्यम्

प्रस्तुत पाठ आधुनिककाल के प्रतिष्ठित संस्कृत साहित्यकार अभिराज राजेन्द्रमिश्र के एकांकी-संग्रह रूपरुद्रीयम् से संकलित है।

'कन्थामाणिक्यम्' का अर्थ है- गुदड़ी का लाल! नगर के जाने-माने हाईकोर्ट के वकील भवानीदत्त को स्वभावतः चिढ़ है गरीबों की बस्ती से। वह नहीं चाहते कि उनका बच्चा सिन्धु गन्दी बस्ती की ओर जाये। परन्तु संयोगवश सिन्धु का मित्र सोमधर उसी बस्ती में रहता है।

दुर्घटना में सिन्धु के आहत होने पर एक दिन वही सोमधर सिन्धु को रिक्शे पर बैठाकर घर लाता है। इधर सिन्धु के घर सब चिन्तित हैं कि बच्चा अभी तक घर क्यों नहीं लौटा? फोन पर फोन होते हैं। भवानीदत्त स्वयं पता लगाने जाना ही चाहते हैं कि एक रिक्शा घर के लॉन में आता है जिस पर सोमधर सिन्धु को गोद में सँभाले बैठा दीखता है।

सोमधर के इस सद्व्यवहार से भवानीदत्त की आँखें खुल जाती हैं। वह उसे गुदड़ी का लाल मान लेते हैं और उसकी शिक्षा का सारा भार अपने ऊपर ले लेते हैं। अब उन्हें गरीबों एवं उनकी बस्ती से बड़ी सहानुभूति हो जाती है।

(समुत्प्रेरकं शिशुजनैकाङ्क्म्)

॥ प्रथमं दृश्यम् ॥

नगरस्य सघनवसतौ प्रख्याताधिवक्तुर्भवानीदत्तस्य भवनम्। भवनान्तरे परिजनानां वार्ताध्वनिः श्रूयते।

भवानीदत्तः - रामदत्त! अयि भो रामदत्त! हरण!

(सेवकौ रामदत्तहरणौ ससम्भ्रमं धावन्तावागच्छतः)

हरणः – (*अङ्गप्रच्छदेन हस्तौ मार्जयन्*)
अन्नदातः! रसवत्यामासम्। किं कर्तुं युज्यते?

रामदत्तः – (*वचोभिः प्रसादयन्*)
स्वामिन्! शीतलमानयानि किञ्चित् उष्णं वा? आहोस्वित् पक्ववटिकादीनि खादितुमिच्छति भवान्?

भवानीदत्तः – (*रोषोत्तप्तां मुखाकृतिं किञ्चिन्मसृणयन्*)
अलम् अलम्। सर्वेऽपि यूयं म्रियध्वे? आहूतोऽपि न शृणोति कश्चित्? गृहमस्ति कस्यचित् भद्रपुरुषस्य भग्नावशेषो वा प्रेतानाम्?

रामदत्तः – (*सापराधमुद्रम्*)
स्! स् स्वामिन् कार्यव्यापृतैरस्माभिर्न श्रुतम्। तत्क्षमन्तामन्नदातारः।

भवानीदत्तः – **भवतु। अलं नाटकेन। गच्छ, सिन्धुमानय तावत्। निषेधं नाटयेच्चेत् कर्णग्राहमानय।**

हरणः – (*भयभीतस्सन्*)
स्वामिन्! किं भर्तृदारकेण किञ्चिदपराद्धम्? इदानी-मेव क्रीडित्वा सोऽपि समागतः। स्वामिन्याः पार्श्वे भविष्यति।

भवानीदत्तः – (*कठोरस्वरेण*)
हरण! कियद्वारं निर्दिष्टोऽसि यत् प्रवचनं न कार्यम्। यदुच्यते तदेव शृणु! किमवगतम्?

हरणः – (*सनैराश्यम्*)
युक्तमेतत् स्वामिन्! एष गच्छामि।
(*हरणो गच्छति। रामदत्तोऽपि तमनुसरति। कति-पयनिमेषानन्तरं द्वावपि भृत्यौ भवानीदत्तस्य पुस्तकाल-यमागच्छतः। पश्चाच्चाधिवक्तुः पत्नी रत्नापि दारकेण सार्धमायाति*)

रत्ना – **किं वृत्तम्? अद्यागतप्राय एव वात्याचक्रमुत्थापयसि? कस्मिंश्चिद् वादे पराजितोऽसि किम्?**

भवानीदत्तः - **बाढम्। गृहेश्वरि! पराजितोऽस्मि तव न्यायालये।**
(हरणरामदत्तौ मुखे करप्रोञ्छनीं विन्यस्याऽट्टहासं रोद्धुं प्रयतेते)

भवानीदत्तः - *(सेवकौ प्रति)*
भो युवां तत्र किमुपजपथः? पलायेथां ततः।
(भृत्यौ हसन्तौ गृहाभ्यन्तरं पलायेते)

रत्ना - *(सस्मितम्)*
अवितथं भण, किं वृत्तम्? मनःस्थितिः कथमद्य संस्खलति?

भवानीदत्तः - *(प्रक्षालनद्रोण्यां मुखं प्रक्षाल्य, प्रच्छदेन च हस्तं मुखं मार्जयन्)*
भणामि, भणामि। सिन्धो! इतस्तावत्।

सिन्धुः - *(सभयं कातरदृष्ट्या जननीं पश्यन्)*
अम्ब!

भवानीदत्तः - *(कठोरदृष्ट्या पश्यन्)*
सिन्धो! इतस्तावत् । तात आह्वयति नाम्बा। आगच्छ।

रत्ना - *(दारकं लालयन्ती सविस्मयम्)*
भो किं कृतवान् सिन्धुः! कथमेवं व्यवहरसि, समागच्छन्नेव अग्निं वर्षयसि? अहमपि तावदा-कर्णयानि।

भवानीदत्तः - **देवि! तदेव वच्मि यत्तव सिन्धुना समाचरितम्। कथं भोः, असभ्यानां वसतौ किमर्थं गतवानसि?**

सिन्धुः - *(सभयम्)* **तात! मम सखा सोमधरस्तत्र निवसति। ततः स्वपुस्तकं ग्रहीतुं गतोऽस्मि।**

भवानीदत्तः - **किं करोति तस्य पिता?**

सिन्धुः - **तस्य पिता चतुश्चक्रे शकटे निधाय शाकान् फलानि च विक्रीणीते।**

भवानीदत्तः - **तव पिता च किं करोति?**

सिन्धुः - **स तु उच्चन्यायालयेऽधिवक्ताऽस्ति।**

भवानीदत्तः - **कीदृशं तव भवनम्?**

सिन्धुः - **अतिसुन्दरं विशालं मार्जितं च मम भवनम् ।**

भवानीदत्तः - **सोमधरस्य च कीदृशम्?**

सिन्धुः - (*हतप्रभः सन्?*)
तस्य गृहं नातिदीर्घम्। अस्वच्छवीथिकायाञ्च स्थितम्। न मार्जितं न चाप्यलंकृतम्।

भवानीदत्तः - (*सक्रोधम्*)
मूर्ख! तस्य गृहमपि नातिदीर्घम्। अस्वच्छवीथिकायां स्थितम्!। तस्य पिताऽपि शाकफलविक्रेता, न तव तात इव शिक्षितः। एवम्भूतेऽपि किमर्थं तत्राऽगमस्त्वम्?

सिन्धुः - (*सदैन्यम्*)
तात! सोमधरः मम सुहृदस्ति। स पठनेऽपि तीक्ष्णः। मय्यतितरां स्निह्यत्यसौ। तस्मादावयोः प्रगाढा मित्रता। स गणिते मम साहाय्यं करोति।

भवानीदत्तः - **भोः पृच्छाम्यहं यत्तेन सह त्वया सख्यमेव कस्मात्कृतम्। तस्मै स्वपुस्तकं कस्माद् दत्तम्? किमुच्चकुलोत्प- न्नाश्छात्राः कक्षायां न सन्ति?**

सिन्धुः - (*निरुत्तरस्सन्*)
तात! सोमधरो मयि स्निह्यति। स मह्यमपि रोचते। अन्ये छात्रास्तु दुष्टाः। ममाध्यापिका सोमधरं कक्षायाः मान्यतरं (*मानीटर*) **कृतवती।**

भवानीदत्तः - (*सोद्वेगम्*)
त्वं कथं न मान्यतरः कृतः? फलशाकविक्रेतुर्दारकः कथं त्वामतिशेते?
(*सिन्धोः कर्णं किञ्चित्कुब्जीकुर्वन्*)
पश्य, इतोऽग्रे तस्यामसभ्यवसतौ न गमिष्यसि। अतः परं शिक्षको भवन्तं गणितमध्यापयिष्यति। अवगतं न वा? सोमधरेण साकं मैत्रीवर्धनस्य न काप्याव- श्यकता।
(*सिन्धुरस्फुटं रुदन् गृहाभ्यन्तरं प्रविशति*)

रत्ना – (*सरोषम्*)

साधु साधु! विलक्षणं पितृहृदयमवाप्तम्। कोमलहृदयं बालकं विद्वेषभावं शिक्षयति भवान्? अये, यो गुणवान् स एव सभ्यः स एव धनिकः, स एव आदरणीयः। तस्य गुणवतः पिता यदि शाकफलानि विक्रीय कुटुम्बं पालयति, तर्हि किमत्र पापम्? स्व-संकीर्णदृष्टिमपलर्पितुं वराकस्य दारकस्य कर्णमेव भञ्जयितुं प्रवृत्तोऽसि। (*दुर्मनायमाना गृहाभ्यन्तरं प्रविशति*)

॥ जवनिकापातः॥

॥ द्वितीयं दृश्यम्॥

सन्ध्याकालस्य चतुर्वादनवेला अधिवक्ता भवानीदत्तः स्वपुस्तकालये निषण्णो दूरभाषयन्त्रं बहुशः प्रवर्तयति। भार्या रत्नापि पार्श्वस्थामासन्दीमुपविश्य चिन्तां नाटयति।

भवानीदत्तः – (*यन्त्रमुपयोजयन्*)

भोः किमिदं भरद्वाजविद्यानिकेतनम्? का नु खलु भवती ब्रवीति? (*श्रुतिं नाटयन्*) **प्राचार्या? शोभनं शोभनम्। अयमहं भवानीदत्तो ब्रवीमि। नमस्करोमि तावत्। श्रूयतां तावत्। चतुर्वादनं जातम्। परन्तु मम दारकस्सिन्धुः इदानीं यावद् गृहं नोपावृत्तः। किं विद्यालयेऽद्य कश्चिन्महोत्सवो वर्तते?**

(*श्रुतिमभिनीय*) **किमुक्तम्? सपादत्रिवादन एवावकाशो जातः। सर्वेऽपि छात्राः गताः! बाढम्। पश्यामि।**

रत्ना – (*ससम्भ्रमम्!*)

किमुक्तवती प्राचार्या? त्रिवादनेऽवकाशो जातः? भो मम हृदयं कम्पते। सिन्धुः क्व वर्तते? भवान् त्वरितमेव स्कूटरयानेन गच्छतु। पश्यतु तावन्मध्येमार्गं विद्यालय-वाहनं क्व वर्तते? हे परमेश्वर! रक्ष मम दारकम्!

(*इति रोदिति*)

भवानीदत्तः - (*सान्त्वयन्*)

गच्छामि, गच्छामि। त्वं पुनः शिशुरिव धैर्यहीना जायसे। कस्मान्मनसि अमङ्गलमेव चिन्तयसि?

रत्ना - **भवान्न जानाति राजपथवृत्तम्। मद्यपा वाहनचालका झञ्झावेगेन यानं चालयन्ति। कोऽपि म्रियेत वा जीवेद्वा। तेषां हतकानां किं जायते? एतत्सर्वं स्मारं स्मारं निमज्जतीव मम हृदयम्।**

भवानीदत्तः - **भवतु। शान्ता भव। त्वरितमागच्छामि।**

(*इति प्रस्थामुपक्रमते। अकस्मादेव रिक्शायानमेकं भवनप्राङ्गणं प्रविशति। कश्चिद्बालकः सिन्धुमङ्के निधाय रिक्शायाने तिष्ठन्नास्ते*)

भवानीदत्तः - (*सत्वरमुपसृत्य*)

अये किमिदम्?

(सिन्धुं विलोक्य)

वत्स! सोमधरस्त्वमेवासि?

सोमधरः - (*सविनयम्*)

पितृव्य! अहमेवास्मि सोमधरः सिन्धोर्मित्रम्। सिन्धोर्विद्यालयवाहनमद्य केनचित् ट्रकयानेन दृढमाहतम्। ट्रकचालकस्त्वपक्रान्तः। सर्वेऽपि बालकाः क्षतविक्षता जाताः।

भवानीदत्तः - **वत्स! त्वं पुनः कुत्राऽसीः?**

सोमधरः - **पितृव्य! अहं पुनः प्रतिदिनमिव अद्यापि पदातिरेवागच्छन्नासम्। दुर्घटनामनु पञ्चनिमेषानन्तरमेव तत्रासादितवान्। महान् जनसम्मर्दस्तत्राऽसीत्। सिन्धुं प्रत्यभिज्ञाय, अहं पुनस्तद् रिक्शायानमधिरोप्य त्वरितं प्रचलितः। पितृव्य! नात्याहितं किमपि। सिन्धुः केवलं मूर्च्छामुपगतः।**

(*वार्तालापं श्रुत्वा भृत्यौ रत्ना च बहिरायान्ति। रत्ना सिन्धुं निस्संज्ञं दृष्ट्वा भृशं रोदिति*)

सोमधरः - **अम्ब! अलं चेतनां खलीकृत्य। डॉक्टरधूलियामहोदय-मानयामीदानीमेव। प्रतिवेश एव निवसत्यसौ।**

भवानीदत्तः - **वत्स सोमधर! मा गाः कुत्रापि त्वम्। मातृसमीपमेव तिष्ठ। अहं दूरभाषयंत्रेणैव भिषजमाह्वयामि।**
(मध्य एव सिन्धुश्चेतनामनुभवति। सोऽम्बामाह्वयति)

सोमधरः - *(सहर्षम्)*
पितृव्यचरण! अलं भिषगाह्वानेन। सिन्धुश्चैतन्यमागतः।
(भवानीदत्तः दारकसमीपं गच्छति। रत्नानेत्रे आनन्दाश्रुपूरिते जायेते)

सिन्धुः - *(अम्बां तातं सोमधरञ्च दृष्ट्वा)*
अम्ब! कथमहं गृहमागतः? मम वाहनन्तु ट्रकयानेन दृढमाहतमासीत्। वयं सर्वेऽपि तारस्वरेणाक्रोशाम। वाहनमस्माकं विपर्यस्तमासीत्।

रत्ना - *(दारकं प्रचुम्बन्ती)*
एवमेतत् वत्स! विपर्यस्तं तव वाहनम्। सोमधर-स्त्वामानीतवान् रिक्शायानेन।

सिन्धुः - *(सप्रणयम्)*
सोमू?
(अकस्मादेव पितरमुपस्थितं दृष्ट्वा सिन्धुः शिथिलीभवति। भवानीदत्तोऽग्रेसरीभूय सोमधरशीर्षे करतलं सारयति। सिन्धुदृष्टिर्दीप्तिमुपगच्छति)

सोमधरः - *(सस्नेहम्)*
सिन्धो! अलं भयेन। सर्वथानाहतोऽसि प्रभुकृपया। श्व आवां पुनर्विद्यालयं गमिष्यावः। भवतु, पितृव्य! गच्छामि इदानीम्। नमस्ते। अम्ब! नमस्ते!!

भवानीदत्तः - *(समादिशन्निव)*
वत्स सोमधर! मित्रगृहान्नैवं गन्तव्यम्। तिष्ठ तावत्। वयं सर्वेऽपि सहैवाल्पाहारं निर्वर्तयिष्यामः। सपीत्य-नन्तरं गच्छसि।

सोमधरः - **पितृव्यचरण! स्वपितुः शाकशकट्याः सज्जा मयैव करणीया वर्तते। स मां प्रतीक्षमाणो भविष्यति।**

भवानीदत्तः - (*हतप्रभः सन्*)

वत्स सोमधर! सत्यमेवासि त्वं कन्थामाणिक्यम्। सिन्धुस्त्वामतितरां प्रशंसति। इतः प्रभृति तव शिक्षण-व्यवस्थामहं सम्पादयिष्यामि।

(*भृत्यौ अल्पाहारमानयतः। सर्वेऽपि निषीदन्त्यशितुम्*)

बाढम्। सोमधर! श्व एवाहं युवयोः कृते द्विचक्रिके क्रेष्यामि। युवां द्वावपि सावधानं प्रवर्तयतम्। सहैवा-गच्छतं सहैव गच्छतम्। वत्स! शुल्कमपि ददासि?

सोमधरः - **न खलु। शुल्कस्तु मुक्तः। निर्धनच्छात्रनिधितः पञ्च-विंशतिरूप्यकाणि प्रतिमासं प्राप्यन्ते।**

भवानीदत्तः - **शोभनम्। वत्स! तथापि यदि धनमपेक्ष्यते तर्हि मां भणिष्यसि।** (*रत्ना पतिं सगर्वं पश्यति*)

सोमधरः - (*चायपेयं परिसमाप्य समुत्तिष्ठन्*)

पितृव्यचरण! गच्छामि तावत्। नमस्ते।

(*रत्नां प्रति*)

अम्ब! प्रणमामि।

(*सिन्धुं लालयन्*)

मित्र सिन्धो! श्वो मिलिष्यावः।

भवानीदत्तः - (*सहर्षं रत्नां प्रति*)

रत्ने! उद्घाटितं त्वयाऽद्य मम नेत्रयुगलम्। सत्यमेव सम्प्रति सिन्ध्वभिरुचिं प्रशंसामि। सोमधरस्तु कन्था-माणिक्यमेव वर्तते। इदानीमनुभूतम्मया यद्गुणवन्त एव सभ्याः धनिकाः सम्माननीयाश्च। न मे द्वेषस्सम्प्रति ग्राम्यवसतिं प्रति। पङ्केऽपि कमलं विकसति। रत्ने! अद्यप्रभृत्यहं त्वन्नेत्राभ्यां संसारं द्रक्ष्यामि।

॥ शनैर्जवनिका पतति ॥

शब्दार्थाः टिप्पण्यश्च

रसवत्याम्	–	पाकशालयाम् (रसवती स.ए.व.), रसोई घर में।
प्रसादयन्	–	मोदयन् (प्र + सद् + शतृ), प्रसन्न करते हुए।
आहोस्वित्	–	अथवा (अव्यय), या।
पक्ववटिका	–	खाद्यपदार्थविशेषः, पकौड़ी।
मसृणयन्	–	मसृणं कुर्वन् (मसृणपदेन नामधातुप्रयोगः), कोमल बनाते हुए।
भग्नावशेषः	–	भग्नभवनम्, खंडहर।
कार्यव्यापृतैः	–	कार्येषु व्यापृतैः, कार्य में लगे (व्यस्त) होने से।
सनैराश्यम्	–	नैराश्येन सहितम्, निराशा से युक्त (होकर)।
दारकेण सार्धम्	–	पुत्रेण सहितम्, पुत्र के साथ।
वात्याचक्रम्	–	झंझावातः, तूफान।
करप्रोञ्छनीम्	–	हस्तप्रोञ्छनीम्, तौलिया को (हाथ पोंछने के वस्त्र को)।
उपजपथः	–	वार्तालापं कुरुथः, कानाफूसी कर रहे हो।
अवितथं भण	–	सत्यं वद; सच बताओ।
प्रक्षालनद्रोण्याम्	–	मुखप्रक्षालनपात्रे; प्रक्षालनाय द्रोणी तस्याम्, मुँह धोने के लिए पात्र परात, तसला आदि।
वच्मि	–	वदामि, बोलता हूँ।
निषण्णः	–	उपविष्टः (नि + सद् + क्त), बैठा हुआ।
आसन्दीम्	–	आसन्दिकायाम्, कुर्सी पर।
उपावृत्तः	–	प्रत्यागतः (उप + वृञ् + क्त), लौटा है।
प्रत्यभिज्ञाय	–	ज्ञात्वा अवबुद्ध्य, पहचानकर।
प्रतिवेशे	–	समीपस्थे गृहे, पड़ोस में।
भिषजम्	–	वैद्यम् (बिभेति अस्मात् रोगः भी + षुक् ह्रस्वश्च), वैद्य को।
विपर्यस्तम्	–	व्युत्क्रान्तम् दुर्घटितम् (वि + परि + अस् + क्त), उलट गया।
कन्थामाणिक्यम्	–	जीर्णवस्त्रेषु रत्नम्, गुदड़ी का लाल।

अभ्यासः

1. **संस्कृतेन उत्तरं दीयताम्**

(क) रामदत्तः वचोभिः प्रसादयन् स्वामिनं किं पृच्छति?
(ख) भवानीदत्तस्य स्वभावः कीदृशः वर्णितः?
(ग) भवानीदत्तस्य पत्न्याः नाम किम् अस्ति?
(घ) सोमधरस्य गृहं कीदृशम् आसीत्?
(ङ) कयोः मध्ये प्रगाढा मित्रता आसीत्?
(च) कस्य विलम्बेन आगमने रत्ना चिन्तिता?
(छ) रत्ना राजपथविषये किं कथयति?
(ज) कः प्रतिदिनं पदातिः गमनागमनं करोति स्म?
(झ) कः वैद्यं दूरभाषेण आह्वयति?
(ञ) सोमधरः कथं धनहीनोऽपि सम्माननीयः?

2. **हिन्दीभाषया आशयं व्याख्यां वा लिखत**

(क) किं वृत्तम्? अद्यागतप्राय एव वात्याचक्रम् उत्थापयसि? रत्नायाः अनेन वाक्येन भवानीदत्तस्य चरित्रं उद्घाटितं भवति।
(ख) पश्य, इतोऽग्रे तस्यामसभ्यवसतौ न गमिष्यसि।
(ग) भवान् न जानाति राजपथवृत्तम्।
(घ) सिन्धो ! अलं भयेन। सर्वथानाहतोऽसि प्रभुकृपया।

3. **अस्य पाठस्य शीर्षकस्य उद्देश्यं संक्षेपेण एकस्मिन् अनुच्छेदे हिन्दीभाषया लिखत**

4. **अधोलिखितेषु विशेष्यपदेषु विशेषणपदानि पाठात् चित्वा योजयत**

(क) .... मुखाकृतिम्।
(ख) .... अस्माभिः।
(ग) .... भृत्यौ।
(घ) .... मित्रता।
(ङ) .... दारकस्य।
(च) .... बालकाः।

5. अधोलिखितपदानां वाक्येषु प्रयोगं कुरुत

मार्जयन्, आनय, पार्श्वे, दारकेण, प्रक्षालयति, सविस्मयम्, वच्मि, शकटे, स्निह्यति, आसन्दी

6. अधोलिखितानां पदानां सन्धिं सन्धिविच्छेदं च कुरुत

(क) भग्नावशेषः = ...
(ख) द्वौ + अपि = ...
(ग) पश्चाच्च = ...
(घ) पराजितः + असि = ...
(ङ) चाप्यलङ्कृतम् = ...
(च) कः + चित् = ...

7. पाठमाश्रित्य रत्नायाः सोमधरस्य च चारित्रिकवैशिष्ट्यम् सोदाहरणं हिन्दीभाषया लिखत

8. कोष्ठाङ्कितेषु पदेषु उपयुक्तपदं चित्वा रिक्तस्थानानि पूरयत

(क) भवान्। पक्ववाटिकादीनि खादितुम् .... (इच्छसि/इच्छन्ति/इच्छति)।

(ख) .... न श्रुतम्। (अहम्/अस्माभिः/माम्)

(ग) हरणरामदत्तौ अट्टहासं रोद्धुं .... । (प्रयतते/प्रयतेते/प्रयतसे)।

(घ) नेत्राभ्यां संसारं .... (दर्शिष्यामि/द्रक्ष्यामि)

(ङ) सोमधरः त्वां .... (आनीतः आनीतवान्/आनीतम्)।

9. अधोलिखितानां कथनानां वक्ता कः/का?

	कथनम्		**वक्ता**
(क)	तत्क्षमन्तामन्नदातारः	–	
(ख)	तात! सोमधरः मयि स्निह्यति	–	
(ग)	अये यो गुणवान् स एव सभ्यः स एव धनिकः स एव आदरणीयः	–	
(घ)	त्वं पुनः शिशुरिव धैर्यहीना जायसे	–	
(ङ)	पितृव्यचरण! स्वपितुः शाकशकट्याः सज्जा मयैव करणीया वर्तते।	–	
(च)	वत्स सोमधर! सत्यमेवासि त्वं कन्थामाणिक्यम्।	–	

योग्यताविस्तारः

1. **पाठगतस्य आशयस्य स्थिरीकरणाय अधोलिखितसूक्तयः दीयन्ते**

(क) सम्पत्तौ च विपत्तौ च महतामेकरूपता।

(ख) आपत्सु मित्रं जानीयात्।

(ग) उत्सवे व्यसने चैव दुर्भिक्षे राष्ट्रविप्लवे।
राजद्वारे श्मशाने च यस्तिष्ठति स बान्धवः।।

(घ) न कश्चित्कस्यचिन्मित्रं न कश्चित्कस्यचिद्रिपुः।
व्यवहारेण मित्राणि जायन्ते रिपवस्तथा।।

(ङ) न मातरि न दारेषु न सोदर्ये न चात्मजे।
विश्वासस्तादृशः पुंसां यादृङ्मित्रे स्वभावजे।।

(च) मित्रं प्रीतिरसायनं नयनयोरानन्दनं चेतसः
पात्रं यत्सुखदुःखयोः सह भवेन्मित्रेण तद्दुर्लभम्।
ये चान्ये सुहृदः समृद्धिसमये द्रव्याभिलाषाकुला–
स्ते सर्वत्र मिलन्ति तत्त्वनिकषग्रावा तु तेषां विपत्।।

2. **अस्य रूपकस्य संवादानां नाट्यप्रस्तुतये अभ्यासः कार्यः**

एकादशः पाठः

ईशः कुत्रास्ति

प्रस्तुत पाठ नोबेल पुरस्कार विजेता कवीन्द्र रवीन्द्रनाथ टैगोर की विश्वविख्यात कृति **गीताञ्जलि** के संस्कृत अनुवाद से संकलित है। इसमें कवि ने ईश्वर की वास्तविक सत्ता को किसानों, मजदूरों और गरीबों में दर्शाया है। इसके अनुवादक को. ल. व्यासराय शास्त्री हैं।

देवागारे पिहितद्वारे
तमोवृतेऽस्मिन् भजसे कम् ?
त्यज जपमालां त्यज तव गानं
नास्त्यत्रेशः स्फुटय दृशम्॥

तत्रास्तीशः, कठिनां भूमिं
यत्र हि कर्षति लाङ्गलिकः।
यत्र च जनपदरथ्याकर्ता
प्रस्तरखण्डान् दारयते॥

ईशस्तिष्ठति वर्षातपयो-
स्ताभ्यां सार्धं मलिनवपुः।
दूरे क्षिप तव शुद्धां शाटी-
मेहि स इव पांसुरभूमिम्॥

मुक्तिः? क्व नु सा दृश्या मुक्तिः!
सलीलमीशः सृजति भुवम्।
तिष्ठति चास्मद्धिताभिलाषी
सविधेऽस्माकं मिषन् सदा॥

ध्वानं हित्वा बहिरेहि त्वं
त्यज तव कुसुमं त्यज धूपम्।
पश्यंस्तिष्ठ स्वेदजलार्द्र-
स्तन्निकटे कार्यक्षेत्रे॥

यदि तव वसनं धूसरितं स्यात्
यदि च सहस्रच्छिद्रं स्यात्।
का वा क्षतिरिह तेन भवेत्ते
तत्त्वमिदं चिन्तय चित्ते॥

शब्दार्थाः टिप्पण्यश्च

देवागारे	–	देवस्य आगारे, देवमन्दिर में।
पिहितद्वारे	–	पिहितं द्वारं यस्य तत् तस्मिन्, बन्द दरवाजे वाले (में)।
तमोवृते	–	तमसावृते, अन्धकार से आच्छादित (में)।
जपमालाम्	–	जपाय मालाम्, मन्त्रादि के जपने की माला को।
नास्त्यत्रेशः	–	न + अस्ति + अत्र + ईशः, यहाँ ईश्वर नहीं है।
स्फुटय	–	खोलो।
दृशम्	–	दृष्टि (आँखें) को।
तत्रास्तीशः	–	तत्र+ अस्ति + ईशः, ईश्वर वहाँ है।

कर्षति	–	हल चलाता है।
लाङ्गलिकः	–	हलवाहा।
जनपदरथ्याकर्ता	–	जनपदस्य रथ्यायाः कर्ता, जनपद की सड़क बनाने वाला।
प्रस्तरखण्डान्	–	प्रस्तराणां खण्डान्, पत्थरों के टुकड़ों को।
दारयते	–	तोड़ता है।
ईशस्तिष्ठति	–	ईशः + तिष्ठति।
वर्षातपयोः	–	वर्षा च आतपश्च वर्षातपौ तयोः, वर्षा और धूप में।
मलिनवपुः	–	मलिनं वपुः यस्य सः अर्थात् दीनः, मैलयुक्त शरीर वाला अर्थात् दीन।
शुद्धाम्	–	साफ (स्वच्छ)।
शाटीम्	–	साड़ी को।
पांसुरभूमिम्	–	धूलिधूसरित, जमीन पर।
सलीलम्	–	लीलया सह, लीला (क्रीडा) के साथ।
चास्मद्धिताभिलाषी	–	च + अस्मद् + हित + अभिलाषी, अस्माकं हितस्य अभिलाषी, हमारा हित चाहने वाला।
सविधे	–	समीप में।
मिषन्	–	देखता हुआ।
बहिरेहि	–	बहिः एहि, बाहर आओ।
पश्यंस्तिष्ठ	–	पश्यन् + तिष्ठ, देखते रहो।
स्वेदजलार्द्रः	–	स्वेदजलेन आर्द्रः, पसीने से लतपथ।
तन्निकटे	–	तत् + निकटे, उसके समीप में।
कार्यक्षेत्रे	–	कार्यस्य क्षेत्रे, कार्य करने की जगह पर।
वसनम्	–	वस्त्र।
सहस्रच्छिद्रम्	–	सहस्राणि छिद्राणि यस्मिन् तत्, हजारों छिद्रों वाला (फटा-पुराना)।
क्षतिः	–	हानि।
तत्त्वमिदम्	–	तत्त्वम् + इदम्, इस तत्त्व को।
चिन्तय	–	विचार करो।
चित्ते	–	चित्त में (मन में)।

अभ्यासः

1. संस्कृतभाषया उत्तरं दीयताम्

(क) ईशः कुत्रास्ति? इति पाठः कस्माद् ग्रन्थात्सङ्कलितः?

(ख) लाङ्गलिकः किं करोति?

(ग) प्रस्तरखण्डान् कः दारयते?

(घ) ईश्वरः काभ्यां सार्द्धं तिष्ठति?

(ङ) कविः जनान् कुत्र गन्तुं प्रेरयति?

(च) कविः किं चिन्तयितुं कथयति?

2. "तत्रास्तीशः कठिनां भूमिं .... दारयते"। इत्यस्य काव्यांशस्य व्याख्या हिन्दीभाषया कर्तव्या

3. रिक्तस्थानानि पूरयत

(क) अस्मिन् .... कं भजसे।

(ख) स्वेदजलार्द्रः .... तिष्ठ।

(ग) ध्यानं हित्वा .... एहि ।

(घ) यदि तव .... धूसरितं स्यात् ।

4. अधोलिखितपदानां वाक्येषु प्रयोगं कुरुत

सार्द्धम्, सविधे, हित्वा, एहि, धूसरितम्, भवेत् ।

5. अधोलिखितेषु सन्धिं कुरुत

तमोवृते + अस्मिन् = ...

ईशः + तिष्ठति = ...

बहिः + एहि = ...

6. अधोऽङ्कितेषु सन्धिविच्छेदं कुरुत

नास्त्यत्रेशः = ... + ...

पश्यंस्तिष्ठ = ... + ...

तन्निकटे = ... + ...

7. ईशस्तिष्ठति .... पांसुरभूमिम्, इत्यस्य श्लोकस्य अन्वयं लिखत

योग्यताविस्तारः

पाठगतस्य आशयस्य स्थिरीकरणाय अधोलिखित - सूक्तयः दीयन्ते

मनः क्षोभं न कस्यापि
प्रकुर्वीत कथञ्चन।
आर्तोच्छ्वासैर्हि दीनानां
जगत् सर्वं प्रणश्यति॥1॥

बद्धाञ्जलिपुटा भृत्या
वित्तेशान् समुपासते।
तेभ्यस्तु ते महीयांसः
कुर्वते ये श्रमार्चनम्॥2॥

सम्भरणेन दीनानां
विपदाशु विलीयते।
ह्रियन्तेऽदातृ - वित्तानि
हिंसकेर्दस्युभिर्बलात्॥3॥

दीनं प्रति घृणाभावः
कर्त्तव्यो न कदाचन।
कृपापात्रं स ते भक्तः
पापकर्मा भवन्नपि॥4॥

अशक्तमपि कार्येषु
अशक्तं मावगच्छ माम्।
समर्थ इति मत्वा मां
व्यवहारं कुरुष्व भोः॥5॥

पाठस्य भावं चेतसि प्रवर्धनाय कानिचित् समभावगीतानि अपि श्राव्यसाधनैः श्रावयितव्यानि।

द्वादशः पाठः

गान्धिनः संस्मरणम्

राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी ने 36 वर्ष की आयु में अपने संस्मरणों को एकत्रित कर अपनी आत्मकथा मातृभाषा गुजराती में लिखी। इसके अनन्तर विश्व की अनेक भाषाओं में इसका अनुवाद किया गया। स्वयं गाँधी जी ने श्रीनिवास शास्त्री के सहयोग से इसका परिशोधन किया। गाँधी जी के अनुसार उनकी आत्मकथा आत्मपरीक्षण के रूप में है।

पण्डित होसकेरे नागप्प शास्त्री जी ने गाँधी जी की आत्मकथा को संस्कृत भाषा में **'सत्यशोधनम्'** नामक ग्रन्थ के रूप में अनूदित किया।

प्रस्तुत पाठ इसी ग्रन्थ से लिया गया है। इसमें यह वर्णित किया गया है कि बचपन में गाँधी जी किस प्रकार श्रवणकुमार की मातृ–पितृभक्ति एवं सत्यवादी राजा हरिश्चन्द्र की सत्यनिष्ठा से अभिभूत हुए।

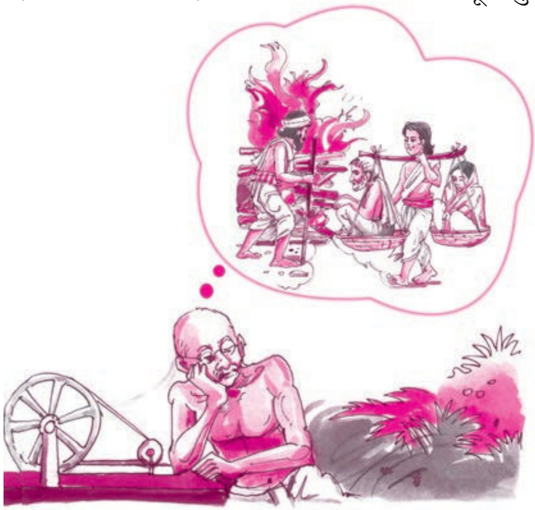

मम पित्रा क्रीत्वा स्थापितस्य श्रवणपितृभक्त्याख्यनाटकग्रन्थस्योपरि कथमपि मे दृष्टिरपतत्। तमेनं तत्परतयाहमपठम्। तत्कालमेव ग्रामाद्ग्रामं

पर्यटन्तः पुत्तलिकाप्रदर्शनोपजीविनः केचिदस्मद्ग्राममुपागमन्। तत्प्रदर्शित-पुत्तलिकासु यात्रामुद्दिश्य स्कन्धावलम्बिवीवधेन स्वमातापितरौ वहमानस्य श्रवणस्य प्रतिकृतिरेका अवलोकिता। एतत्पुस्तकं पुत्तलिका चेति द्वयं मिलित्वा श्रवणकथां मे मनसः कदाप्यप्रमार्जनीयामकरोत्। श्रवणस्य पितृभक्तिरादर्शरूपेण त्वया स्थापनीयेत्यात्मनात्मानमबोधयम्। श्रवणस्य मरणेन सन्तप्यमानयोस्तत्पित्रोर्विलापोऽद्यापि मे मनसि पुनःपुनः श्रूयते इव। मदर्थे पित्रा वितीर्णेन वाद्येन तमहमालापयम्। स रागो मे हृदयं तन्मयमकरोत्।

नाटकान्तरसम्बन्धिन्यपरा तत्सदृशी घटनैका संवृत्ता। एतत्कालमेव कयापि नाटकमण्डल्या प्रयुक्तं नाटकमवलोकयितुं पितुरनुज्ञाम् अध्यगच्छम्। तन्नाटकं हरिश्चन्द्रचरितात्मकमासीत्। तदेतल्लोचनासेचनकं मम मानसमकर्षत्। किन्त्वनुज्ञां कतिकृत्वः प्राप्य गन्तुं शक्येत। तथाप्येतन्निमित्तं व्यसनं नैव माममुञ्चत्। निस्संख्यवारमिदं नाटकं मया स्वयं मनसा प्रयुक्तं स्यात्। हरिश्चन्द्रेणेव सर्वैरपि कस्मात् सत्यवद्भिर्न भवितव्यम्। इत्येष प्रश्नो दिवानिशं मे मनसि पुनःपुनः अस्फुरत् सत्यानुसरणं सत्यस्यार्थे हरिश्चन्द्रवन्निर्विकल्पेन मनसा क्लेशानामनुभवः। इत्येष आदर्श एक एव मे मनस्याविरभूत्। हरिश्चन्द्रकथायामक्षरशः सत्यत्वप्रतीतिरासीत्। सर्वस्यास्य स्मरणमनेकशो मे नेत्राभ्यामश्रूणि निस्सारितानि। हरिश्चन्द्रश्रवणावुभावपि मम हृदये नित्यसंनिहितौ स्तः। अद्यापि तन्नाटकपाठेन पूर्ववन्मे हृदयं विलीयत इत्यहं जाने।।

शब्दार्थाः टिप्पण्यश्च

क्रीत्वा – खरीदी हुई।

स्थापितस्य – रखी हुई, सुरक्षित।

श्रवणपितृभक्त्याख्य – श्रवणपितृभक्ति इति आख्या यस्य तत् नाटकम्, 'श्रवणपितृभक्ति' नाम वाले।

पर्यटन्तः – परि + अट् + शतृ प्र.वि.ब.व., घूमते हुए।

पुत्तलिका+प्रदर्शन+उपजीविनः	–	कठपुतली का नाच दिखा कर जीविका चलाने वाले।
उपागमन्	–	उप + आङ् + गम् + लुङ् प्र.पु. ब.व., आये।
स्कन्ध+अवलम्बि+वीवधेन	–	कन्धे पर लटकी काँवड (बँहगी)।
वहमानस्य	–	वह् + शानच् षष्ठी ए. व., ढोते हुए, उठाते हुए, ले जाते हुए।
प्रतिकृतिः	–	चित्र, फोटो।
अवलोकिता	–	देखी।
कदापि+अप्रमार्जनीयाम्	–	कभी न मिटने वाली (अमिट)।
स्थापनीया + इति + आत्मना + आत्मानम् अबोधयम्	–	स्थापित करना चाहिये ऐसा स्वयं को स्वयं से ही समझाया।
सन्तप्यमानयोः	–	सम् + तप् धातु कर्मवाच्य + शानच्, तड़पते हुए (का) षष्ठी द्वि.व. दुखी होते हुए (का)।
तत्पित्रोः+विलापः+अद्यापि	–	उसके माता-पिता का रोदन आज भी
वितीर्णया	–	प्रदत्तया, दी गई।
आलापयम्	–	(आङ् + लप् णिच् + उ.पु. ए.व.), गाया।
अनुज्ञाम्	–	आज्ञा को (अनु + ज्ञा + अङ् टाप् द्वि. ए.व.)।
अध्यगच्छम्	–	प्राप्त किया।
तत्+एतत्+लोचन+आसेचनकम्	–	आँखों को शीतल करने वाले ऐसे उस नाटक को, नेत्रानन्ददायक उस नाटक को।
अकर्षत्	–	आकृष्ट किया।
कतिकृत्वः	–	कति + कृत्वस् अव्यय, कितनी बार।
गन्तुं शक्येत	–	शक् + कर्मवाच्य + विधि प्र.पु.ए.व., जाया जा सकता है।
व्यसनम्	–	लगन, आसक्ति।
निस्संख्यवारम्	–	अनेक बार, बहुत बार।
दिवानिशम्	–	दिवा च निशा च, तयोः समाहारः, द्वन्द्वसमासः, दिन-रात।

पुनःपुनः अस्फुरत् – स्फुर् + लङ् (प्र.पु. ए.व.) बार-बार उभरता हुआ।
हरिश्चन्द्रवत् निर्विकल्पेन – हरिश्चन्द्र के समान सच्चे (सत्यनिष्ठ)।
मनसि + आविरभूत् – मन में प्रकट हुआ।
निस्सारितानि – बहाये हैं।
विलीयते – लीन हो रहा है।

अभ्यासः

1. संस्कृतेन उत्तरं दीयताम्

(क) प्रस्तुतः पाठः कस्माद् ग्रन्थात् सङ्कलितः?
(ख) गान्धिनः आत्मकथा मूलतः कस्यां भाषायां लिखिता ?
(ग) गान्धिनः आत्मकथायाः संस्कृतभाषायाम् अनुवादकः कः?
(घ) महात्मा गाँधी किन्नाम नाटकम् अपठत् ?
(ङ) गान्धिनः ग्रामं के उपागच्छन्?
(च) गान्धिनः मनसि कयोः विलापः पुनः पुनः श्रूयते स्म?
(छ) महात्मा गान्धी हरिश्चन्द्रनाटकं द्रष्टुं कस्य अनुज्ञाम् अध्यगच्छत्?
(ज) कस्य कथायां सत्यत्वप्रतीतिः आसीत्?
(झ) कौ गान्धिनः हृदये नित्यसन्निहितौ आस्ताम्?
(ञ) कीदृशस्य श्रवणस्य प्रतिकृतिः गान्धिना अवलोकिता?
(ट) गान्धिनः मनसा किं प्रयुक्तम् आसीत्?
(ठ) कः प्रश्नः गान्धिनः मनसि पुनः पुनः स्फुरति स्म?

2. रिक्त स्थानानि पूरयत

(क) ग्रामात् ग्रामं .... पुत्तलिकाप्रदर्शनोपजीविनः उपागच्छन्?
(ख) श्रवणस्य पितृभक्तिः .... त्वया स्थापनीया।
(ग) स रागः मे .... तन्मयमकरोत्।
(घ) अनेकशः मे नेत्राभ्याम् .... विस्सारितानि।
(ङ) हरिश्चन्द्रश्रवणौ .... मम हृदये नित्यसन्निहितौ।

3. अधोलिखितेषु यथानिर्देशं पदचयनादिकं कुरुत

(क) अस्मात् पाठात् अव्ययपदानि चिनुत।
(ख) एतेषां शब्दानां संस्कृतवाक्ये प्रयोगं कुरुत
पर्यटनम्, उद्दिश्य, संवृत्ता, प्राप्य, भवितव्यम्
(ग) अस्मिन् पाठे कर्मवाच्ये प्रयुक्तानि क्रियापदानि चिनुत।
(घ) अधोलिखितशब्दानां समानार्थकं शब्दं लिखत
लोचनम्, पितरौ, मनः

4. अधोलिखितपदेषु सन्धिं सन्धिविच्छेदं वा कुरुत

(क) दृष्टिरपतत् = ... + ...
(ख) ग्रामात् + ग्रामम् = ...
(ग) कदा + अपि + अप्रमार्जनीयाम् = ...
(घ) घटनैका = ... + ...
(ङ) तत् + नाटकम् = ...
(च) इत्येष = ... + ...
(छ) मनसि + आविरभूत् = ...

5. हिन्दीभाषया आशयं स्पष्टीकुरुत

(क) सत्यानुसरणं सत्यस्यार्थे हरिश्चन्द्रवन्निर्विकल्पेन मनसा क्लेशानामनुभवः।
(ख) निस्संख्यवारमिदं नाटकं मया स्वयं मनसा प्रयुक्तं स्यात्।
(ग) श्रवणस्य पितृभक्तिरादर्शरूपेण त्वया स्थापनीयेत्यात्मनात्मानमबोधयम्।

योग्यताविस्तारः

गान्धिनः संस्मरणम् इति पाठम् अनुसृत्य मातृभक्तेः पितृभक्तेः एवं सत्यनिष्ठायाः भावं दृढीकरणाय इमे श्लोकाः प्रस्तूयन्ते।

1. **मातृमान् पितृमान् आचार्यवान् पुरुषो वेद।** *(शतपथब्राह्मणात्)*

2. **उपाध्यायान् दशाचार्यः**
   आचार्याणां शतं पिता।
   सहस्त्रं तु पितॄन् माता
   गौरवेणातिरिच्यते॥ *(मनुस्मृतेः)*

3. **मातृदेवो भव, पितृदेवो भव, आचार्यदेवो भव।** *(उपनिषदः)*

4. **माता गुरुतरा भूमेः पितोच्चतरस्तथा खात्।** *(महाभारतात्)*

5. **सत्यमेवेश्वरो लोके सत्ये धर्मः सदाश्रितः।**
   सत्यमूलानि सर्वाणि सत्यान्नास्ति परं पदम्॥ *(रामायणात्)*

6. **भूमिः कीर्तिर्यशो लक्ष्मीः पुरुषं प्रार्थयन्ति हि।**
   सत्यं समनुवर्तन्ते सत्यमेव भजेत्ततः॥ *(रामायणात्)*

7. **बलं सर्वबलेभ्योऽपि सत्यमेवातिरिच्यते।**
   सत्यवानबलः श्रेयान् सबलात् सत्यवर्जितात्॥ *(रामायणात्)*

त्रयोदशः पाठः

सत्त्वमाहो रजस्तमः

गीता का दिव्य संदेश किसी जाति, धर्म, सम्प्रदाय अथवा देशविशेष के लिए उपादेय नहीं है। इसका अमूल्य उपदेश सार्वभौमिक एवं सार्वकालिक है। गीता के उपदेश का अनुसरण एवं जीवन के सर्वपक्षों का समुचित विकास कर मनुष्य देवत्व (श्रेष्ठत्व) को प्राप्त कर सकता है।

गीता में जीवन के उच्चतम आदर्श को प्राप्त करने के लिए सर्वसुलभ उपदेश है। इस ग्रन्थरत्न को उपनिषदों के साररूप में स्वीकार किया गया है। हृदय की दुर्बलता पर विजय प्राप्त करने वाले अर्जुन की तरह पाठक को ऐहिक और पारमार्थिक सुखों की प्राप्ति गीता द्वारा संभव है। दार्शनिक चिन्तन, भक्तिवर्णन एवं कर्मनिष्ठा के द्वारा गीता विश्व में सर्वाधिक प्रतिष्ठित स्वरूप को प्राप्त कर चुकी है।

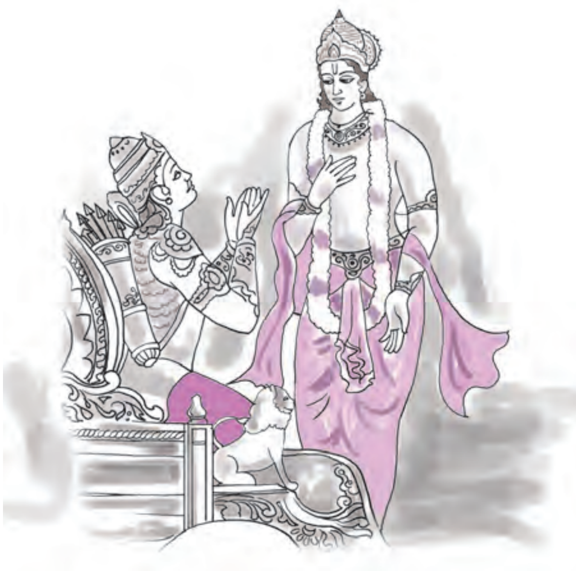

प्रस्तुत पाठ में जीवों में व्याप्त स्वभावजन्य श्रद्धा तथा सत्त्व-रजस्-तमो गुणोपेत भेदों का वर्णन, साथ ही श्रद्धायुक्त पुरुष, भेद एवं त्रिविध सत्त्व-रजस्-तमो गुणों से युक्त आहार, तप और दान का वर्णन किया गया है।

त्रिविधा भवति श्रद्धा देहिनां सा स्वभावजा।
सात्त्विकी राजसी चैव तामसी चेति तां शृणु।।

सत्त्वानुरूपा सर्वस्य श्रद्धा भवति भारत।
श्रद्धामयोऽयं पुरुषो यो यच्छ्रद्धः स एव सः।।

यजन्ते सात्त्विका देवान्यक्षरक्षांसि राजसाः।
प्रेतान्भूतगणांश्चान्ये यजन्ते तामसा जनाः।।

अशास्त्रविहितं घोरं तप्यन्ते ये तपो जनाः।
दम्भाहंकारसंयुक्ताः कामरागबलान्विताः।।

आहारस्त्वपि सर्वस्य त्रिविधो भवति प्रियः।
यज्ञस्तपस्तथा दानं तेषां भेदमिमं शृणु।।

आयुः सत्त्वबलारोग्यसुखप्रीतिविवर्धनाः।
रस्याः स्निग्धाः स्थिरा हृद्या आहाराः सात्त्विकप्रियाः।।

कट्वम्ललवणात्युष्णतीक्ष्णरूक्षविदाहिनः।
आहार राजसस्येष्टा दुःखशोकामयप्रदाः।।

यातयामं गतरसं पूतिं पर्युर्षितं च यत्।
उच्छिष्टमपि चामेध्यं भोजनं तामसप्रियम्।।

देवद्विजगुरुप्राज्ञपूजनं शौचमार्जवम्।
ब्रह्मचर्यमहिंसा च शारीरं तप उच्यते।।

अनुद्वेगकरं वाक्यं सत्यं प्रियहितं च यत्।
स्वाध्यायाभ्यसनं चैव वाङ्मयं तप उच्यते।।

मनः प्रसादः सौम्यत्वं मौनमात्मविनिग्रहः।
भावसंशुद्धिरित्येतत्तपो मानसमुच्यते।।

श्रद्धया परया तप्तं तपस्तत्त्रिविधं नरैः।
अफलाकाङ्क्षिभिर्युक्तैः सात्त्विकं परिचक्षते॥

सत्कारमानपूजार्थं तपो दम्भेन चैव यत्॥
क्रियते तदिह प्रोक्तं राजसं चलमध्रुवम्॥

मूढग्राहेणात्मनो यत्पीडया क्रियते तपः।
परस्योत्सादनार्थं वा तत्तामसमुदाहृतम्॥

दातव्यमिति यद्दानं दीयतेऽनुपकारिणे।
देशे काले च पात्रे च तद्दानं सात्त्विकं स्मृतम्॥

यत्तु प्रत्युपकारार्थं फलमुद्दिश्य वा पुनः।
दीयते च परिक्लिष्टं तद्दानं राजसं स्मृतम्॥

अदेशकाले यद्दानमपात्रेभ्यश्च दीयते।
असत्कृतमवज्ञातं तत्तामसमुदाहृतम्॥

शब्दार्थाः टिप्पण्यश्च

श्रद्धा	–	(श्रत्+धा+अङ्+टाप्) आस्था, निष्ठा
देहिनाम्	–	(देह+इनि] (पुं.,ष.वि.बहु.व.)– जीवों का
स्वभावजा	–	(स्वभावात् जायते इति, स्त्री.)– स्वभाव से उत्पन्न
सात्त्विकी	–	(सत्त्व+ठञ्, स्त्री.)– सत्त्वगुण से युक्त, वास्तविक
राजसी	–	(रजसा निर्मितम्–अण्, स्त्री.) रजो गुण से प्रभावित/युक्त
तामसी	–	(तमोऽस्त्यस्य अण्, स्त्री.) प्रकृति के तीन गुणों में से एक, अज्ञानी
सत्त्वानुरूपा	–	(सत्त्वस्य अनुरूपा) सत्त्व के अनुरूप
यच्छ्रद्धः	–	(यस्य श्रद्धा (भवति) सः) जिसकी श्रद्धा है, वह
यजन्ते	–	(यज्–आत्मनेपद) यज्ञ करते हैं।

अशास्त्रविहितम् – (शास्त्रेण विहितम्-शास्त्रविहितम् न शास्त्रविहितम्) शास्त्र द्वारा विधान न किया हुआ

जनाः – (जन्+अच्), ब.व., मनुष्य

रक्षांसि – (रक्षस्, नपुं., बहु.व., रक्ष्+असुन्) राक्षस

दम्भाहंकारसंयुक्ताः – (दम्भाहंकाराभ्यां संयुक्ताः) दंभ और अहंकार से संयुक्त

शृणु – (श्रु-श्रवणे) श्रवण करना, सुनना

रस्याः – (रस्+यत्) रस वाले, रुचिकर

स्निग्धाः – (स्निह्+क्त) चिकने

स्थिर – (स्था+किरच्) ठहरने वाले

हृद्याः – (हृद्+यत्) हृदय को प्रिय लगने योग्य

सात्त्विकप्रियाः – (सात्त्विकानां प्रियाः) सात्त्विकों के प्रिय

आयुःसत्त्वबलारोग्य – (आयुश्च सत्त्वं च बलं च आरोग्यञ्च सुखञ्च-**सुखप्रीतिविवर्धानाः** प्रीतिश्च- आयुः सत्त्वबलारोग्यसुखप्रीतयः, तेषां विवर्धनाः) आयु, सत्त्व, बल, आरोग्य, सुख और प्रीति को बढ़ाने वाले।

कट्वम्ललवणात्युष्णाती – (कटश्च, अम्लः च, लवणः च, अत्युष्णः च, तीक्ष्णः-**क्ष्णरूक्षविदाहिनः** च, रूक्षः च, विदाही च) कड़वे, खट्टे, अतिलवणयुक्त, बहुत गर्म, तीखे, सूखे और बहुत दाह पैदा करने वाले।

इष्टाः – (इष्+क्त) अभिलषित, चाहे गए।

यातयामम् – (यातः यामः यस्य तत्)- आधा पका हुआ

गतरसम् – (गतः रसः यस्मात्)- रसरहित

पूति – (पूय्+क्तिच्) दुर्गन्धियुक्त

पर्युषितम् – (परि+वस्+क्त) बासी

उच्छिष्टम् – (उत्+शिष्+क्त) शेष, बचा हुआ, जूठा

अमेध्यम् – (न मेध्यम्) अपवित्र, अस्वच्छ

देवद्विजगुरुप्राज्ञपूजनम्	–	(देवद्विजगुरुप्राज्ञानां पूजनम्) देवता, ब्राह्मण, गुरु और विद्वान का पूजन
शौचम्	–	(शुचेर्भाव: अण्) पवित्रता
आर्जवम्	–	(ऋजु+अण्) सरलता, स्पष्टवादिता
ब्रह्मचर्यम्	–	(ब्रह्मणि चर्या यस्य यत्) ब्रह्मचर्य
शारीरम्	–	(शरीर+अण्) शारीरिक, दैहिक
अनुद्वेगकरम्	–	(न उद्वेगकरम्) उत्तेजित नहीं करने वाला
प्रियहितम्	–	(प्रियं च हितं च) प्रिय और हितकारी
स्वाध्यायाभ्यसनम्	–	(स्वाध्याय: च अभ्यसनम् च) स्वाध्याय और अभ्यास।
वाङ्मयम्	–	(वाच्+मयट्) वाणी से युक्त, वाचिक
सौम्यत्वम्	–	(सौम्य+त्व) सौम्यता
आत्मविनिग्रह:	–	(आत्मन: विनिग्रह:) आत्मनियंत्रण
त्रिविधम्	–	तीन प्रकार का
परिचक्षते	–	(परि+चक्ष्, आत्मनेपद) कहता है
सत्कारमानपूजार्थम्	–	(सत्कारमानपूजाभ्य: इति) सत्कार, मान और पूजा के लिए।
अध्रुवम्	–	(न ध्रुवम्) अस्थिर, स्थायी
उत्सादनार्थम्	–	(उत्सादनाय इति) नाश करने के लिए।
दातव्यम्	–	(दा+तव्यत्) देने योग्य
अनुपकारिणे	–	(न उपकारिणे) उपकार न करने वाले को।
प्रत्युपकारार्थम्	–	(प्रति+उपकारार्थम्) प्रत्युपकार के लिए।
उद्दिश्य	–	(उत्+दिश्+ल्यप्) उद्देश्य करके।
परिक्लिष्टम्	–	(परि+क्लिश्+क्त) क्लेश युक्त।
तद्दानम्	–	(तत्+दानम्) वह दान।
पात्रेभ्यश्च	–	(पात्रेभ्य:+च) पात्रों को
असत्कृतम्	–	(न सत्कृतम्) अपवित्र
अवज्ञातम्	–	(अव+ज्ञा+क्त) अवज्ञा/ अनादर युक्त
उदाहृतम्	–	(उत्+आ+हृ+क्त) कहा गया

अभ्यासः

1. एकपदेन उत्तरत–

(क) श्रद्धा कतिविधा भवति?
(ख) देहिनां का स्वभावजा भवति?
(ग) आहारः कतिविधो भवति?
(घ) दुःखशोकामयप्रदाः आहाराः कस्य इष्टाः?
(ङ) कीदृशं वाक्यं वाङ्मयं तप उच्यते?
(च) देशे काले पात्रे च दीयमानं कीदृशं दानं भवति?
(छ) प्रत्युपकारार्थं यद्दानं तत् कीदृशं दानं कथ्यते?
(ज) तामसं दानं पात्रेभ्यः दीयते अपात्रेभ्यः वा?

2. पूर्णवाक्येन उत्तरत–

(क) श्रद्धा कस्य अनुरूपा भवति?
(ख) तामसा जनाः कान् यजन्ते?
(ग) के जनाः दम्भाहंकारसंयुक्ताः भवन्ति?
(घ) सात्त्विकप्रियाः आहाराः कीदृशाः भवन्ति?
(ङ) किं किं शारीरं तप उच्यते?
(च) राजसं दानं किम् उच्यते?

3. रेखांकितपदानि आधृत्य प्रश्ननिर्माणं कुरुत–

(क) अयं पुरुषः श्रद्धामयः भवति।
(ख) सात्त्विकाः देवान् यजन्ते।
(ग) पर्युषितं भोजनं तामसप्रियं भवति।
(घ) शारीरं तप उच्यते।
(ङ) वाङ्मयं तप उच्यते।
(च) यद्दानम् अपात्रेभ्यः दीयते।

4. प्रकृतिप्रत्ययविभागं कुरुत–

	प्रकृतिः	प्रत्ययः
यथा–त्रिविधा –	त्रिविध	टाप्
(क) सात्त्विकी–	....	....

(ख) पर्युषितम्- ....

(ग) सौम्यत्वम्- ....

(घ) तप्तम् - ....

(ङ) दातव्यम् - ....

(च) उद्दिश्य - ....

5. पर्यायपदैः सह मेलनं कुरुत-

यथा-	**जनाः**	**मनुष्याः**
(क) देवः -	....	....
(ख) गुरुः -	....	....
(ग) प्राज्ञः -	....	....
(घ) शौचम् -	....	....
(ङ) आर्जवम् -	....	....

6. विलोमपदैः सह योजयत-

यथा- **देवः**	**दानवः**
(क) अहिंसा	अपात्रे
(ख) अनुद्वेगकरम्	असत्यम्
(ग) अभ्यसनम्	काठिन्यम्
(घ) सत्यम्	अनभ्यसनम्
(ङ) पात्रे	उद्वेगकरम्
(च) सौम्यत्वम्	हिंसा

7. विशेषणं विशेष्येण सह मेलनं कुरुत-

यथा- त्रिविधा	श्रद्धा
(क) सत्त्वानुरूपा	आहारः
(ख) तामसाः	भोजनम्
(ग) घोरम्	वाक्यम्
(घ) प्रियः	जनाः
(ङ) पर्युषितम्	तपः
(च) अनुद्वेगकरम्	श्रद्धा

8. सन्धिं सन्धिच्छेदं वा कुरुत-

(क) चैव - ....
(ख) तपो जनाः - ....
(ग) यज्ञस्तपस्तथा - ....
(घ) आहारस्त्वपि - ....
(ङ) राजसस्य+इष्टा - ....
(च) उत्+शिष्टम् - ....
(छ) वाक्+मयम् - ....
(ज) प्रति+उपकारार्थम्- ....

9. विग्रहपदानि आधृत्य समस्तपदानि रचयत-

विग्रहपदानि		समस्तपदानि
(क) न शास्त्रविहितम्	-	....
(ख) अहंकारेण संयुक्ताः	-	....
(ग) पर्युषितं भोजनम्	-	....
(घ) न उद्वेगकरम्	-	....
(ङ) प्रियं च हितं च	-	....
(च) मनसः प्रसादः	-	....

योग्यताविस्तारः

(क) श्रीमद्भगवद्गीतायां त्रिविधिः विभागः कृतः। तद्यथा-

सत्त्वं रजस्तम इति गुणाः प्रकृतिसम्भवाः।
निबध्नाति महाबाहो देहे देहिनमव्ययम्॥

(गी. 14/5)

एते त्रयः गुणाः- 1. सत्त्वम् 2.रजः 3. तमः

1. सत्त्वगुणः- **तत्र सत्त्वं निर्मलत्वात्प्रकाशकमनामयम्।**
खसङ्गेन बध्नाति ज्ञानससङ्गेन चानघ॥

(गी. 14/6)

2\. रजोगुणः– **रजो रागात्मकं विद्धि तृष्णासङ्गसमुद्भवम्।**
तन्निबध्नाति कौन्तेय कर्मसङ्गेन देहिनम्।।

(गी. 14/7)

3\. तमोगुणः– **तमस्त्वज्ञानजं विद्धि मोहनं सर्वदेहिनाम्।**
प्रमादालस्यनिद्राभिस्तन्निबध्नाति भारत।।

(गी. 14/8)

(ख) 'तपः' पदस्य मूलशब्दः 'तपस्' इति विद्यते।

एतदनुरूप- शब्दाः–मनस् (मन), तमस्(अन्धकार), वचस् (वचन), रजस् (रजोगुण), यशस् (यश), सरस् (तालाब), नभस् (आकाश), इत्यादयः। एते शब्दाः नपुंसकलिङ्गे सन्ति। शब्दरूपाणि एतानि–

'तपस्' (तप) नपुंसकलिङ्गे

विभक्तिः	**एकवचने**	**द्विवचने**	**बहुवचने**
प्रथमा	तपः	तपसी	तपांसि
द्वितीया	तपः	तपसी	तपांसि
तृतीया	तपसा	तपोभ्याम्	तपोभिः
चतुर्थी	तपसे	तपोभ्याम्	तपोभ्यः
पञ्चमी	तपसः	तपोभ्याम्	तपोभ्यः
षष्ठी	तपसः	तपसोः	तपसाम्
सप्तमी	तपसि	तपसोः	तपस्सु
संबोधन	हे तपः!	हे तपसी!	हे तपांसि!

(ग) अधोलिखितैः श्लोकैः गीतायाः महत्तां ज्ञातुम् अर्हति

सर्वोपनिषदो गावो दोग्धा गोपालनन्दनः।
पार्थो वत्सः सुधीर्भोक्ता दुग्धं गीतामृतं महत्।।

गीता सुगीता कर्तव्या किमन्यैः शास्त्रसंग्रहैः।
या स्वयं पद्मनाभस्य मुखपद्माद्विनिःसृता।।

गीताश्रयेऽहं तिष्ठामि गीता मे चोत्तमं गृहम्।

गीताज्ञानमुपाश्रित्य त्रींल्लोकान् पालयाम्यहम्।।

चतुर्दशः पाठः

नवद्रव्याणि

तर्क शब्द का अर्थ है– प्रमाण (यथार्थज्ञान का साधन)। जो प्रमाण के विषय हैं वे तर्क के अन्तर्गत गृहीत हैं। द्रव्यादि सप्त प्रमेय पदार्थ एवं प्रत्यक्षादि चार प्रमाण तर्क के विषय हैं। इनका संक्षेप से लक्षण एवं परीक्षा करना ही इस ग्रन्थ का मुख्य उद्‌देश्य है। तर्क शास्त्र व्याकरण एवं साहित्य आदि शास्त्रों के लक्षणों का पदकृत्य जानने की जिज्ञासा का उत्पादक होने से छात्रों के लिए उपयोगी है। इसके रचयिता अन्नंभट्ट हैं, इनका समय 17वीं शताब्दी माना जाता है। तर्कशास्त्र की मान्यता के अनुसार द्रव्यादि सप्त पदार्थों के ज्ञान से लोकसिद्धि होकर निःश्रेयस अर्थात् मोक्ष प्राप्ति होती है। विश्व का समग्र ज्ञान इन सप्त पदार्थों में ही समाहित है।

'तर्कसंग्रह' न्याय एवं वैशेषिक दर्शन के प्रवेश की कुञ्जी है। वैशेषिक दर्शन को भौतिक विज्ञान के प्रति प्राचीन भारतीय योगदान का पोषक ग्रन्थ माना जाता है। छात्र प्राच्य ज्ञान की समृद्ध परम्परा से परिचय एवं उसकी अनुभूति कर सकें, यही इस पाठ का उद्‌देश्य है।

द्रव्य-गुण-कर्म-सामान्य-विशेष-समावायाभावाः सप्त पदार्थाः।

तत्र द्रव्याणि पृथिव्यप्तेजोवाय्वाकाशकालदिगात्ममनांसि नवैव।

रूप-रस-गन्ध-स्पर्श-संख्या-परिमाण-पृथक्त्व-संयोग-विभाग-परत्वापरत्व-गुरुत्व-द्रवत्व-स्नेह-शब्द-बुद्धि-सुख-दुःखेच्छा-द्वेष-प्रयत्न-धर्माधम-संस्काराश्चतुर्विंशतिर्गुणाः।

उत्क्षेपणापक्षेपणाकुञ्चन-प्रसारण-गमनानि पञ्च कर्माणि।

परमपरं चेति द्विविधं सामान्यम्।

नित्यद्रव्यवृत्तयो विशेषास्त्वनन्ता एव।

समवायस्त्वेक एव।

अभावश्चतुर्विधः–प्रागभावः प्रध्वंसाभावोऽत्यन्ताभावोऽन्योन्या भावश्चेति।

द्रव्यलक्षणप्रकरणम्।

तत्र गन्धवती पृथिवी। सा द्विविधा नित्याऽनित्या च।
नित्या–परमाणुरूपा। अनित्या कार्यरूपा।

शीतस्पर्शवत्य आपः। ता द्विविधाः–नित्या अनित्याश्च।
नित्याः परमाणुरूपाः। अनित्याः कार्यरूपाः।

पुनस्त्रिविधाः–शरीरेन्द्रियविषयभेदात्।

उष्णस्पर्शवत्तेजः। तच्च द्विविधं–नित्यमनित्यं च।

नित्यं परमाणुरूपम्। अनित्यं कार्यरूपम्।

पुनस्त्रिविधं–शरीरेन्द्रियविषयभेदात्।

रूपरहितः स्पर्शवान् वायुः। स द्विविधः–नित्योऽनित्यश्च।

नित्यः परमाणुरूपः अनित्यः कार्यरूपः

पुनस्त्रिविधः–शरीरेन्द्रियविषयभेदात्।

शब्दगुणकमाकाशम्। तच्चैकं विभु नित्यं च।

अतीतादिव्यवहारहेतुः कालः। स चैको विभुर्नित्यश्च।

प्राच्यादिव्यवहारहेतुर्दिक्। सा चैका। नित्या विभ्वी च।

ज्ञानाधिकरणमात्मा। स द्विविधः–जीवात्मा परमात्मा चेति।
तत्रेश्वरः सर्वज्ञः। परमात्मा एक एव, जीवस्तु प्रतिशरीरं भिन्नो विभुर्नित्यश्च।

दुःखाद्युपलब्धिसाधनमिन्द्रियं मनः। तच्च

प्रत्यात्मनियतत्वादनन्तं परमाणुरूपं नित्यं च।

शब्दार्थाः टिप्पणयश्च

द्रव्यम् – द्रव्यत्व जातित्वं गुणवत्त्वं वा द्रव्यसामान्यलक्षणम्-गुण एवं क्रिया का आधार (द्रव्य)।

समवायः – इहेदमिति यतः स समवायः। जिसके कारण यह इसमें है, ऐसी अनुभूति होती है, वह समवाय है। यह नित्य सम्बन्ध है जो कार्य-कारण, क्रिया-क्रियावान्, गुण-गुणी एवं जाति और व्यक्ति के बीच होता है।

अभावः – निषेधमुख अर्थात् नहीं है, ऐसी अनुभूति का विषय 'अभाव' है। यह चार प्रकार का है- प्रागभव, प्रध्वंसाभाव, अत्यन्ताभाव, अन्योन्याभाव।

संस्कार – संस्कारस्त्रिविधः- वेगः, भावना, स्थितिस्थापकश्च। **वेग**-सभी मूर्त्त द्रव्यों में होता है जैसे पृथ्वी, जल, वायु एवं मन। **भावना**- यह आत्मा का गुण है, स्मरण एवं प्रत्यभिज्ञा का कारण यही है। **स्थितिस्थापकः**-पूर्वस्थिति में लौटने का कारण, कारणभूत।

कर्म – चलनात्मकं कर्म- चलने का स्वभाव कर्म है। कर्म के पांच प्रकार हैं- **उत्क्षेपणम्**- उर्ध्वदशसंयोग हेतुः- उर्ध्व स्थान संयोग का कारण। **अपक्षेपणम्**- ओदेशसंयोगहेतुः-निम्नस्थान के संयोग हेतु। **आकुञ्चन**- शरीरस्य सन्निकृष्टसंयोगहेतुः- शरीर के संकोचरूपी संयोग का हेतु। **प्रसारण**- विप्रकृष्ट-संयोगहेतुः- शरीर के विस्ताररूपी संयोग का हेतु।

गमन – उत्क्षेपणादि चार प्रकार के कर्मों के अतिरिक्त समस्त प्रकार की क्रियायें गमन में स्वीकृत हैं।

प्रागभाव – अनादिसान्तः उत्पत्तेः पूर्वं कार्यस्य- जिस अभाव का आदि नहीं हो परन्तु अन्त हो अर्थात् कार्य की उत्पत्ति से पूर्व की अवस्था।

प्रध्वंसाभावः – सादिरनन्तः उत्पत्त्यनन्तरं कार्यस्य- जिस भाव का आदि हो अन्त न हो अर्थात् कार्य के प्रध्वंस की परवर्ती अवस्था।

अत्यन्ताभावः	–	त्रैकालिक संसर्गाभावः– सर्वथा अभाव।
अन्योन्याभावः	–	तादात्म्यसम्बन्धाभावः– एक का दूसरे में अभाव यथा– घटः पटो न पटः घटो न।
विभुः/विभु/विभ्वी	–	पु./नपुं./स्त्री. सर्वव्यापक।
दिक्	–	प्राच्यादिव्यवहारहेतुः– पूर्व पश्चिम आदि दिशा।
अधिकरणम्	–	आधार।
प्रत्यात्मम्	–	आत्मनि आत्मनि इति– हर आत्मा में।

अभ्यासः

1. एकपदेन उत्तरं लिखत–

(क) पदार्थाः कति भवन्ति?

(ख) पृथिव्याः कति भेदाः उक्ताः?

(ग) तेजः कीदृशं कथ्यते?

(घ) अतीतादिव्यवहारहेतुः कः?

(ङ) आत्मा कतिविधः?

2. पूर्णवाक्येन उत्तरत–

(क) कस्मात् ग्रन्थात् सङ्गृहीतः एषः पाठः?

(ख) कानि पञ्चकर्माणि पाठे वर्णितानि?

(ग) मनः कस्य साधनम्?

(घ) वायोः कतिभेदाः?

(ङ) अतीतादिव्यवहारहेतुः कालः, स च कीदृशः?

3. मञ्जूषातः पदान्यादाय रिक्तस्थानानि पूरयत–

त्रिविधम्, गन्धवती, प्रसारण, परमाणुरूपः, अनन्तम्

(क) आपः शरीरेन्द्रियविषयभेदात्.................................भवति।

(ख) वायोः द्वौ भेदौ नित्यः.................................अनित्यः कार्यरूपश्च।

(ग) पृथिवी.................................सा नित्याऽनित्या, परमाणुरूपा कार्यरूपा च।

(घ) उत्क्षेपणाऽपक्षेपणाऽऽकुञ्चन.................................गमनानि पञ्चकर्माणि भवन्ति।

(ङ) मनः प्रत्यात्मनियतत्वात्.................................परमाणुरूपं नित्यं च।

4. यथोचितं योजयत–

(क) शीतस्पर्शवत्यः – सर्वज्ञः

(ख) चतुर्विधः – रूपरहितः

(ग) ईश्वरः – अभावः

(घ) वायुः – आकाशम्

(ङ) शब्दगुणकम् – आपः

5. सन्धिविच्छेदं कृत्वा सन्धेः नाम लिखत–

		नाम
(क) चैकः	........................+........................	....
(ख) प्रत्यात्मम्	........................+........................	....
(ग) तच्च	........................+........................	....
(घ) अभावश्च	........................+........................	....
(ङ) पृथिव्यप्तेजः	........................+........................	....

6. प्रदत्तपदान्यधिकृत्य वाक्यानि रचयत ।

अनित्यम्, चतुर्विंशतिः, नवैव, समवायः, रूपरहितः।

7. पाठात् विपरीतार्थकपदानि चित्वा लिखत–

(क) उत्क्षेपणम्

(ख) सामान्यम्

(ग) अनित्या

(घ) पृथिवी

(ङ) अनन्तम्

8.अ. अधोलिखितपदानां मूलशब्दं, विभक्तिं, वचनं, लिङ्गं च लिखत–

(क) द्रव्याणि

(ख) मनांसि

(ग) विभ्वी

(घ) गुणाः

(ङ) लक्षणानि

आ. समस्तपदानां विग्रहं कृत्वा लिखत–

(क) सप्तपदार्थाः

(ख) अनन्ताः

(ग) शरीरेन्द्रियविषयभेदात्

(घ) व्यवहारहेतुः

(ङ) रूपरहितः

9. कानि पञ्चकर्माणि? सोदाहरणं स्पष्टयत–

योग्यताविस्तारः

तर्कसंग्रहस्य रचयिता अन्नमभट्टः। अस्य रचना बालकानां कृते तर्कशास्त्रस्य ज्ञानार्थं कृता।

''बालानां सुखबोधाय क्रियते तर्कसङ्ग्रहः''

बालकानां कृते एषः ग्रन्थः अतीव उपयोगी अस्ति। अस्मिन् ग्रन्थे महर्षिगौतमप्रणीतन्यायदर्शनस्य एवं कणादप्रणीतवैशेषिकदर्शनस्य सिद्धान्तानां वर्णनम् अस्ति।

काणादन्यायमतयोर्बालव्युत्पत्तिसिद्धये।
अन्नम्भट्टेन विदुषा रचितस्तर्कसंग्रहः॥

महर्षिणा गौतमेन षोडशपदार्थानां चर्चा कृता कणादेन च सप्तपदार्थानां चर्चा कृता। तर्कसंग्रहेऽपि सप्तपदार्थानां वर्णनं अन्नम्भटेन कृतम्।

महर्षिणा गौतमेन वर्णितषोडशपदार्थाः–

1.प्रमाणम्	2.प्रमेयम्	3.संशयः	4.प्रयोजनम्	5.दृष्टान्तः
6.सिद्धान्तः	7. अव्ययः	8.तर्कः	9.निर्णयः	10.वादः
11.जल्पः	12.वितण्डा	13.हेत्वाभासः	14.छलः	15.जातिः
16.निग्रहस्थानम्				

अन्नम्भट्टानुसारेण सप्तपदार्थाः

1.द्रव्यम् 2.गुणः 3.कर्म 4.सामान्यः 5.विशेषः 6. समवायः 7.अभावः

महर्षिणा गौतमेन वर्णितषोडशपदार्थानाम् अन्तर्भावः अन्नम्भट्टस्य सप्तपदार्थेषु एव भवति।

सर्वेषां पदार्थानां सम्बन्धः विज्ञानेन सह अपि अस्ति। विज्ञाने पदार्थः (matter) इति नाम्ना वर्णितः। **यथा–**

Matter is any substance that has mass and takes up space by having volume. This includes atoms anything made up of these.

छन्द

छन्द

पद्य लिखते समय वर्णों की एक निश्चित व्यवस्था रखनी पड़ती है। यह व्यवस्था छन्द या वृत्त कहलाती है।

वृत्त के भेद

प्रायः प्रत्येक पद्य के चार भाग होते हैं, जो पाद या चरण कहलाते हैं। जिस वृत्त के चारों चरणों में बराबर वर्ण हों, वे समवृत्त कहलाते हैं। जिसके प्रथम और तृतीय तथा द्वितीय और चतुर्थ चरण वर्णों की दृष्टि से समान हों, वे अर्धसमवृत्त हैं। जिसके चारों चरणों में वर्णों की संख्या समान न हो, वे विषमवृत्त कहे जाते हैं।

गुरु लघु व्यवस्था

छन्द की व्यवस्था वर्णों पर आधारित रहती है, मुख्यतः स्वर वर्ण पर। ये वर्ण छन्द की दृष्टि से दो प्रकार के होते हैं- लघु और गुरु। सामान्यतः ह्रस्व स्वर लघु होता है और दीर्घ स्वर गुरु। किन्तु कुछ परिस्थितियों में ह्रस्व स्वर लघु न होकर गुरु माना जाता है। छन्द में गुरु-लघु व्यवस्था का नियम इस प्रकार है- अनुस्वारयुक्त, दीर्घ, विसर्गयुक्त, संयुक्तवर्ण के पूर्व का वर्ण गुरु होता है। शेष सभी वर्ण लघु होते हैं। छन्द के किसी पाद का अंतिम वर्ण लघु होने पर भी आवश्यकतानुसार गुरु मान लिया जाता है।

सानुस्वारश्च दीर्घश्च विसर्गी च गुरुर्भवेत्।
वर्णः संयोगपूर्वश्च तथा पादान्तगोऽपि च॥

गुरु एवं लघु के लिए अधोलिखित चिह्न प्रयुक्त होते हैं-

गुरु – ऽ

लघु – ।

यति व्यवस्था

छन्द में जिस-जिस स्थान पर किञ्चिद् विराम होता है, उसको 'यति' कहते हैं। विच्छेद, विराम, विरति आदि इसके नामान्तर हैं।

यतिर्जिह्वेष्टविश्रामस्थानं कविभिरुच्यते।
सा विच्छेदविरामाद्यैः पदैर्वाच्या निजेच्छया।।

गण व्यवस्था

आदिमध्यावसानेषु भजसा यान्ति गौरवम्।
यरता लाघवं यान्ति मनौ तु गुरुलाघवम्।।

तीन वर्णों का एक गण माना जाता है। गुरु-लघु के क्रम से गण आठ प्रकार के होते हैं।

भगण	-	ऽ।।	**जगण**	-	।ऽ।
सगण	-	।।ऽ	**यगण**	-	।ऽऽ
रगण	-	ऽ।ऽ	**तगण**	-	ऽऽ।
मगण	-	ऽऽऽ	**नगण**	-	।।।

क. वैदिक छन्द

वैदिक मन्त्रों में गेयता का समावेश करने के लिए जिन छन्दों का प्रयोग हुआ है उनमें गायत्री, अनुष्टुप् तथा त्रिष्टुप् प्रमुख हैं।

गायत्री लक्षण : जिस छन्द के तीन चरण हों, प्रत्येक चरण में आठ वर्ण हों वह गायत्री छन्द होता है। इसका पाँचवाँ वर्ण लघु तथा छठा वर्ण गुरु होता है। उदाहरण-

पावका नः सरस्वती वाजेभिर्वाजिनीवती।
यज्ञं वष्टु धिया वसुः।।

(*यजुर्वेदः -40/1*)

अनुष्टुप् लक्षण : अनुष्टुप् छन्द में चार चरण होते हैं, प्रत्येक चरण में आठ वर्ण होते हैं।

सङ्गच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।
देवा भागं यथा पूर्वे सञ्जानाना उपासते ।।

त्रिष्टुप् लक्षण : जिस छन्द के चार चरण हों और प्रत्येक चरण में ग्यारह अक्षर हों वह त्रिष्टुप् छन्द होता है। उदाहरण–

समानो मन्त्रः समितिः समानी समानं मनः सह चित्तमेषाम्
समानं मन्त्रमभिमन्त्रये वः समानेन वो हविषा जुहोमि॥

(*ऋग्वेदः 10/192/3*)

ख. लौकिक छन्द

प्रस्तुत पुस्तक के पाठों में अनेक लौकिक छन्दों को भी संकलित किया गया है। अतः संकलित श्लोकों के छन्दों के लक्षण तथा उदाहरण प्रस्तुत हैं–

1. **अनुष्टुप् लक्षण–आठ वर्णों वाला समवृत्त**
   अनुष्टुप् छन्द के सभी चारों चरणों का पाँचवाँ वर्ण लघु, छठा वर्ण गुरु तथा प्रथम एवं तृतीय चरण का सातवाँ वर्ण गुरु और द्वितीय एवं चतुर्थ चरण का सातवाँ वर्ण लघु होता है। इसे श्लोकछन्द भी कहते है। उदाहरण–

   पतितैः पतमानैश्च, पादपस्थैश्च मारुतः।
   कुसुमैः पश्य सौमित्रे! क्रीडन्निव समन्ततः॥

   (*रामायणम्*)

2. **इन्द्रवज्रा लक्षण– (ग्यारह वर्णों वाला समवृत्त)**
   जिस छन्द के प्रत्येक पाद में दो तगण, एक जगण और दो गुरु वर्ण क्रम से हों वह इन्द्रवज्रा छन्द होता है।
   स्यादिन्द्रवज्रा यदि तौ जगौ गः।
   उदाहरण–

   हंसो यथा राजतपञ्जरस्थः, सिंहो यथा मन्दरकन्दरस्थः।
   वीरो यथा गर्वितकुञ्जरस्थश्चन्द्रोऽपि बभ्राज तथाम्बरस्थः॥

   (*रामायणम्*)

3. **उपेन्द्रवज्रा लक्षण– (ग्यारह वर्णों का समवृत्त)**
   जिस छन्द के प्रत्येक पाद में क्रमशः एक जगण, एक तगण, एक जगण और दो गुरु वर्ण हों वह उपेन्द्रवज्रा छन्द होता है।

उपेन्द्रवज्रा जतजास्ततो गौ। उदाहरण–

त्वमेव माता च पिता त्वमेव
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव
त्वमेव सर्वं मम देव-देव।

4. उपजाति लक्षण– (ग्यारह वर्णों वाला समवृत्त)

जिस छन्द में इन्द्रवज्रा तथा उपेन्द्रवज्रा के चरणों का मिश्रण होता है वह उपजाति छन्द होता है।

अनन्तरोदीरितलक्ष्मभाजौ पादौ यदीयावुपजातयस्ताः।
इत्थं किलान्यास्वपि मिश्रितासु वदन्ति जातिष्विदमेव नाम ॥

इस छन्द का प्रथम तथा तृतीय चरण उपेन्द्रवज्रा छन्दानुसार तथा द्वितीय एवं चतुर्थ चरण इन्द्रवज्रानुसार हैं। अतः इसे उपजाति छन्द कहा जा सकता है।

उदाहरण–

अस्त्युत्तरस्यां दिशि देवतात्मा, (*इन्द्रवज्रा*)
हिमालयो नाम नगाधिराजः। (*उपेन्द्रवज्रा*)
पूर्वापरौ तोयनिधीवगाह्य,
स्थितः पृथिव्या इव मानदण्डः॥ (*कुमारसम्भवम्*)

5. मालिनी लक्षण– (पन्द्रह वर्णों वाला समवृत्त)

जिस छन्द के प्रत्येक चरण में क्रमशः दो नगण, एक मगण तथा दो यगण हों वह मालिनी छन्द होता है। इसके प्रत्येक चरण में आठवें तथा तदनन्तर सातवें अर्थात् चरण के अन्तिम वर्ण पन्द्रहवें वर्ण के बाद यति (विराम) होती है। **ननमयययुतेयं मालिनी भोगिलोकेः।**

उदाहरण–

मम हि पितृभिरस्य प्रस्तुतो ज्ञातिभेद-
स्तदिह मयि तु दोषो वक्तृभिः पातनीयः।
अथ च मम स पुत्रः पाण्डवानां तु पश्चात्
सति च कुलविरोधे नापराध्यन्ति बालाः॥ (*पञ्चरात्रम्*)

अलङ्कार

लोक में जिस प्रकार आभूषण शरीर की शोभा बढ़ाने में सहायक होते हैं उसी प्रकार काव्य में उपमादि अलंकार उसकी चारुता की अभिवृद्धि करते हैं। वस्तुतः काव्य के शोभाधायक तत्व को ही अलंकार कहते हैं।

शब्दार्थयोरस्थिरा ये धर्माः शोभातिशयिनः।
रसादीनुपकुर्वन्तोऽलङ्कारास्तेऽङ्गदादिवत्॥

शब्द तथा अर्थ को काव्य का शरीर कहा गया है। अतः काव्य-शरीर का अलंकरण भी शब्द तथा अर्थ दोनों रूपों में होता है। जो अलंकार शब्दों के द्वारा काव्य में चारुता की अभिवृद्धि करते हैं वे शब्दालंकार कहे जाते हैं जैसे अनुप्रास, यमक आदि। जो अलंकार अर्थ के द्वारा काव्य की चारुता की अभिवृद्धि करते हैं वे अर्थालंकार कहे जाते हैं, जैसे उपमा, रूपक आदि। इन दोनों प्रकार के अलंकारों का प्रस्तुत संकलन के पाठों में प्रयोग हुआ है। कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं–

अनुप्रासः

वर्णसाम्यमनुप्रासः। (*काव्यप्रकाशः*)

समान वर्णों की आवृत्ति को अनुप्रास अलंकार कहा जाता है।

उदाहरण –

वहन्ति वर्षन्ति नदन्ति भान्ति ध्यायन्ति नृत्यन्ति समाश्वसन्ति।
नद्यो घना मत्तगजा वनान्ताः प्रियाविहीनाः शिखिनः प्लवंगाः॥

(*रामायणम्*)

इस श्लोक में आए हुए वहन्ति, वर्षन्ति, नदन्ति, भान्ति, ध्यायन्ति, नृत्यन्ति तथा समाश्वसन्ति इन शब्दों में अनेक वर्णों की समान आवृत्ति है जो श्लोक की चारुता की अभिवृद्धि में सहायक है। अतः यहाँ पर **अनुप्रास** अलंकार है।

यमकः

सत्यर्थे पृथगर्थायाः स्वरव्यञ्जनसंहतेः।
क्रमेण तेनैवावृत्तिर्यमकं विनिगद्यते॥ (*साहित्यदर्पणम्*)

जब वर्ण समूह की उसी क्रम से पुनरावृत्ति की जाए किंतु आवृत्त वर्ण समुदाय या तो भिन्नार्थक हो या अंशतः अथवा पूर्णतः निरर्थक हो तो यमक अलंकार कहलाता है। उदाहरण–

प्रकृत्या हिमकोशाढ्यो दूरसूर्यश्च साम्प्रतम्।
यथार्थनामा सुव्यक्तं हिमवान् हिमवान् गिरिः॥

इस श्लोक में हिमवान् शब्द की आवृत्ति हुई है और दोनों पद भिन्नार्थक हैं। अतः यहाँ पर प्रयुक्त अंलकार यमक है जो श्लोक के सौंदर्य की अभिवृद्धि में सहायक है।

उपमा

साधर्म्यमुपमा भेदे। (*काव्यप्रकाशः, 10, 87*)

दो वस्तुओं में, भेद रहने पर भी, जब उनकी समानता प्रतिपादित की जाती है तो वहाँ उपमा अलंकार होता है। उदाहरण–

रविसंक्रान्तसौभाग्यस्तुषारारुणमण्डलः।
निःश्वासान्ध इवादर्शश्चन्द्रमा न प्रकाशते॥ (*रामायणम्*)

यहाँ पर सूर्य के प्रकाश से मलिन चन्द्रमा की उपमा निःश्वासों से मलिन आदर्श (दर्पण) से दी गई है। यह उपमा श्लोक के अर्थ की चारुता की वृद्धि में सहायक है।

उपमा में चार तत्त्व होते हैं

1. उपमेय – जिसकी समानता बताई जाए
2. उपमान – जिससे समानता बताई जाए
3. साधारण धर्म – उक्त दोनों में समान गुण
4. वाचक शब्द – समानता प्रकट करने वाले शब्द– इव यथा आदि।

रूपकम्

तद्रूपकमभेदो य उपमानोपमेययोः। (*काव्यप्रकाशः, 10,93*)

अतिशय सादृश्य के कारण जहाँ उपमेय को उपमान का रूप दे दिया जाये अथवा उपमेय पर उपमान का आरोप कर दिया जाये वहाँ रूपक अलंकार होता है। उदाहरण–

अनलंकृतशरीरोऽपि चन्द्रमुख आनन्दयति मम हृदयम्।

सौवर्णशकटिका पाठ के इस वाक्य में प्रयुक्त चन्द्रमुख शब्द में रूपक अलंकार है। यहाँ पर मुख पर चन्द्रमा का आरोप होने से रूपक अलंकार है।

उत्प्रेक्षा

''भवेत् सम्भावनोत्प्रेक्षा प्रकृतस्य परात्मना।।

(*साहित्यदर्पणम्*)

पर (उपमान) के द्वारा प्रकृत (उपमेय) की सम्भावना (उत्कट सन्देह) को उत्प्रेक्षा अलंकार कहते हैं।

उदाहरण–

पतितैः पतमानैश्च पादपस्थैश्च मारुतः।
कुसुमैः पश्य सौमित्रे! क्रीडन्निव समन्ततः।। (*रामायणम्*)

यहां पर वायु के द्वारा पुष्पों के साथ की जाने वाली क्रीडा की सम्भावना में उत्प्रेक्षा अलंकार है।

अर्थान्तरन्यासः
भवेदर्थान्तरन्यासोऽनुषक्तार्थान्तराभिधा।

(*चन्द्रालोकः, 5.66*)

मुख्य अर्थ का समर्थन करने वाले अर्थान्तर (दूसरे वाक्यार्थ) का प्रतिपादन (न्यास) अर्थान्तरन्यास कहलाता है। उदाहरण–

यः स्वभावो हि यस्यास्ति स नित्यं दुरतिक्रमः।
श्वा यदि क्रियते राजा तत्किं नाश्नात्युपानहम्।।

यहाँ पर पूर्वार्द्ध के वाक्यार्थ का समर्थन उत्तरार्द्ध के वाक्यार्थ द्वारा किया गया है। अतः यहाँ अर्थान्तरन्यास अलंकार है।

अतिशयोक्तिः

सिद्धत्वेऽध्यवसायस्यातिशयोक्तिर्निगद्यते।

(*साहित्यदर्पणम्, 10.46*)

अध्यवसाय के सिद्ध उपमेय के लिए केवल उपमान का ही कथन होने पर अतिशयोक्ति अलंकार होता है। अध्यवसाय का तात्पर्य है- उपमेय के निगरण के साथ उपमान से अभेद का आरोप अर्थात् उपमेय तथा उपमान में अभेद की स्थापना ।

उदाहरण-

यूथेऽपयाते हस्तिग्रहणोद्यतेन केन कलभो गृहीतः।

यहाँ पर अर्जुन को हस्ती तथा अभिमन्यु को कलभ (हाथी का बच्चा) के रूप में प्रस्तुत किया गया है। इस प्रकार उपमेय अर्जुन व अभिमन्यु का निगरण कर उन्हें उपमान हस्ती तथा कलभ के रूप में प्रस्तुत किया गया है। अतः यहाँ अतिशयोक्ति अलंकार है।

अनुशंसित ग्रन्थ

क्र.सं.	ग्रन्थनाम	लेखक	सम्पादक/प्रकाशक
1.	**ऋग्वेद**		सं प्र. एन. एस. सोनटक्के, वैदिक संशोधन मण्डल, पूना – 2, 1946
2.	**यजुर्वेद**	उव्वटमहीधरभाष्य	चौखम्बा प्रकाशन, वाराणसी, 1912
3.	**अथर्ववेद**		सातवलेकर, पारडी, 1957
4.	**रामायण**	वाल्मीकि	चौखम्बा प्रकाशन, वाराणसी, 1977
5.	**महाभारतम्**	व्यास	भण्डारकर प्राच्यविद्यासंशोधन संस्थानम् पुण्यपत्तनम् (पूना) 1975
6.	**जातकमाला**	आर्यशूर	सूर्यनारायण चौधरी, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1971
7.	**मृच्छकटिकम्**	शूद्रक	निर्णयसागर प्रेस, मुम्बई
8.	**मृच्छकटिक**	शूद्रक	मोहन राकेश (हिन्दी अनुवादक) राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1962
9.	**चरकसंहिता**	चरक	चौखम्बा संस्कृत संस्थान, वाराणसी, 1984
10.	**भवानी भारती**	अरविन्द	अरविन्दाश्रम, पाण्डिचेरी
11.	**पुरुषपरीक्षा**	विद्यापति	खेमराज श्रीकृष्णदास, मुम्बई
12.	**सत्यशोधनम्**	पं. होसकेरे नागप्पशास्त्री	गाँधी स्मारक निधि, नई दिल्ली (भारतीय विद्या भवन, मुम्बई, 1965)
13.	**रूपरुद्रीयम्**	प्रो. राजेन्द्र मिश्र	वैजयन्त प्रकाशन, इलाहाबाद
14.	**तदेव गगनं सैवधरा**	प्रो. श्रीनिवास रथ	राष्ट्रिय संस्कृत संस्थानम्, नई दिल्ली

15. **गीताञ्जलि** (संस्कृतानुवाद)		को.ल. व्यासराय शास्त्री
16. **Sanskrit Drama in its Origin, Development and Theory**	A.B.Keith	Oxford Press, London, 1924
17. **संस्कृत नाटक**	ए.बी.कीथ	उदय भानु सिंह (हिन्दी अनुवाद), मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली,
18. **संस्कृत साहित्य का इतिहास**	बलदेव उपाध्याय	शारदा मन्दिर, वाराणसी, 1973
19. **वैदिक साहित्य और संस्कृति**	बलदेव उपाध्याय	शारदा मंदिर, वाराणसी, 1973
20. **History of Classical Sanskrit Literature**	M.Krishnamacharya	Moti Lal Banarsidas, Delhi
21. **A History of Sanskrit Literature**	A.A. Macdonell	Moti Lal Banarsidas, Delhi 1962
22. **संस्कृत साहित्य का इतिहास**	वाचस्पति गैरोला	चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, 1978
23. **संस्कृत साहित्य का अभिनव इतिहास**	राधावल्लभ त्रिपाठी	विश्वविद्यालय प्रकाशन, चौक, वाराणसी, 2001
24. **संस्कृत और राष्ट्र की एकता**		राधावल्लभ त्रिपाठी, अक्षयवट प्रकाशन बलरामपुर हाऊस इलाहाबाद, 1991
25. **संस्कृत रवीन्द्रम्**		वी. राघवन्, साहित्य अकादमी, रवीन्द्रभवन, नई दिल्ली, 1966